ओ३म्

पाक्षिक

परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५५ अंक - ४ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र फरवरी (द्वितीय) २०१४

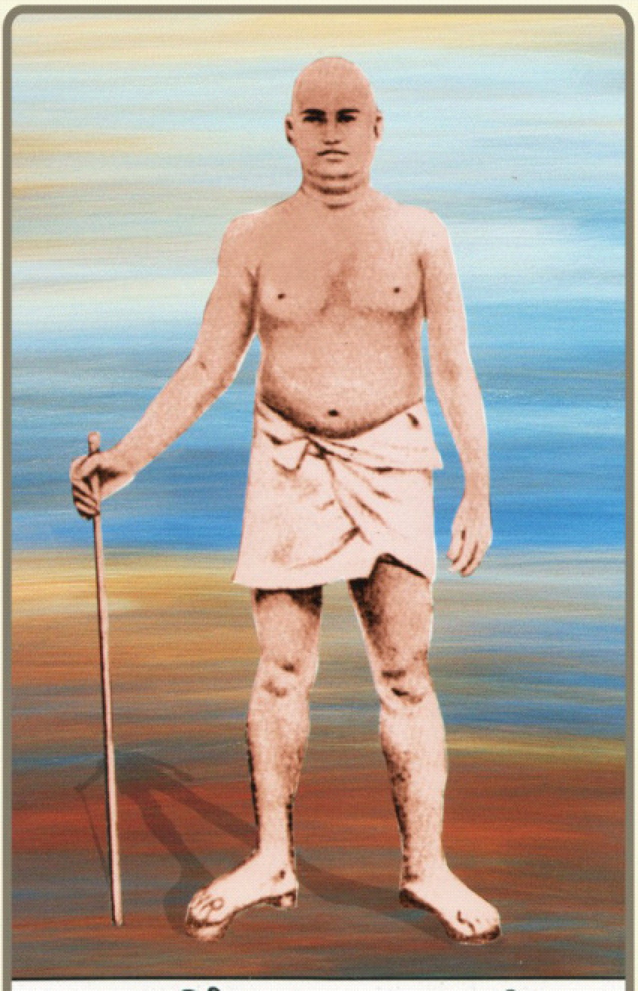

महर्षि दयानन्द सरस्वती
सन्-१८२४ - सन्-१८८३

वैदिक पुस्तकालय के नवीन प्रकाशन

।।ओ३म्।।

महर्षि दयानन्द की शिक्षाएँ

१. मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दु:ख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।

२. मनुष्य को उचित है कि सब प्रकार का पुरुषार्थ करके अवश्य धार्मिक हो।

३. जब मनुष्य धार्मिक होता है, तब उसका विश्वास और मान्य शत्रु भी करते हैं।

४. मनुष्यों को उन लोगों की ही प्रशंसा करनी चाहिये कि जो सब के सुखों की वृद्धि करें।

५. जो मनुष्य परस्पर की वृद्धि करते हैं, वे सब ओर से बढ़ते हैं। किसी को भी अच्छी कामना नहीं छोड़नी चाहिये।

६. इस संसार में एक धर्म ही सुहृद् है, जो मृत्यु के पश्चात् भी साथ चलता है और सब पदार्थ व संगी शरीर के नाश के साथ ही नाश को प्राप्त होते हैं।

७. विद्या ही मनुष्यों को सुख देने वाली है; जिसने विद्या-धन न पाया, वह भीतर से सदा दरिद्र सा वर्त्तमान रहता है।

८. जो-जो विद्या और धर्मप्राप्ति के कर्म हैं, वे प्रथम करने में विष के तुल्य और पश्चात् अमृत के सदृश होते हैं।

९. जैसे श्वास-प्रश्वास सदा लिये जाते हैं, बन्ध नहीं किये जाते; वैसे नित्यकर्म प्रतिदिन करना चाहिये, न किसी दिन छोड़ना।

१०. हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना; अब भी पालन होता है; आगे होगा; उसकी उन्नति तन-मन-धन से सब जने मिलकर प्रीति से करें।

११. धन का स्वभाव है कि जहाँ इकट्ठा होता है, उन जनों को निद्रालु, आलसी और कर्महीन कर देता है। इससे धन पाकर भी मनुष्य को पुरुषार्थ ही करना चाहिये।

१२. जो उपासना आरम्भ करना चाहे, उसके लिये यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रखे, सर्वदा प्रीति करे।

१३. जो परमात्मा को छोड़ के वा उसके स्थान में दूसरे की पूजा करता है, उसकी और उस देशभर की अत्यन्त दुर्दशा होती है, यह प्रसिद्ध है।

१४. उस (परमात्मा) की सेवा छोड़ के जो मनुष्य अन्य मूर्त्यादि की सेवा करता है, वह कृतघ्नत्वादि महादोषयुक्त होके सदैव दु:खभागी होता है।

१५. जिससे मनुष्यों को सत्यासत्य का ज्ञान होता है, उसको वेद कहते हैं।

१६. सब पुरुषार्थ यही है कि परमात्मा, उसकी आज्ञा और उसके रचे जगत् का यथार्थ से निश्चय करना।

१७. जिसने विद्या के प्रकाश से अच्छा जानकर न किया और बुरा जानकर न छोड़ा हो तो क्या वह चोर के समान नहीं है?

प्रकाशक : वैदिक पुस्तकालय, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) ३०५००१ सम्पर्क :०१४५-२४६०१२०
Email : psabhaa@gmail.com • Website : www.paropkarinisabha.com
₹ २५/-

सम्बन्धित विवरण पृष्ठ ६ पर

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५५ **अंक :** ४
दयानन्दाब्द: १८९
विक्रम संवत्: फाल्गुन कृष्ण, २०७०
कलि संवत्: ५११४
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११४

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२११७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९/५९

परोपकारी

फरवरी द्वितीय २०१४

अनुक्रम

१. भारत में शिक्षा की समस्या	सम्पादकीय	०४
२. स्वरूपेऽवस्थानम्	स्वामी विष्वङ्	०७
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	१०
४. सप्तसिन्धु देश की मुद्राएँ	विरजानन्द दैवकरणि	१५
५. आधार कार्ड की विसंगतियाँ	डॉ. माधुरी गुप्ता	१६
६. संस्कारों-संस्कृति की भाषा : हिन्दी	प्रभुलाल चौधरी	१८
७. वेदों में श्लेष अलंकार से वर्णित.....	डॉ. सुद्युम्न आचार्य	२४
८. संवेदनशीलता - जीवन का एक...	सुकामा आर्या	२६
९. सुक्रतु बनने के लिए	महात्मा चैतन्युनि	३०
१०. शब्द नित्य अथवा अनित्य	वेदनिष्ठ:	३३
११. जिज्ञासा समाधान-५७	आचार्य सोमदेव	३६
१२. संस्था-समाचार		३९
१३. आर्यजगत् के समाचार		४१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

भारत में शिक्षा की समस्या

संसार में मनुष्य को जीवित रहने के लिये कार्य करने की आवश्यकता होती है। कार्य करने से हमारे जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। आवश्यकतायें बहुत प्रकार की हैं अतः मनुष्य को बहुत प्रकार के कार्य करने पड़ते हैं। कार्यों के बहुत प्रकार होने पर भी दो ही प्रकार के कार्य मुख्य हैं। समस्त व्यवसाय इन दो के अन्तर्गत आ जाते हैं। प्रथम व्यवसाय है कृषि, इस व्यवसाय से मनुष्य का शरीर बनता है। मनुष्य अन्न से ही जीवित रहता है और अन्न कृषि कर्म से ही प्राप्त किया जा सकता है। दूसरा व्यवसाय है शिक्षा, इसके द्वारा मनुष्य का मानसिक और बौद्धिक निर्माण होता है। खेती के बिगड़ने से स्वास्थ्य बिगड़ता है और शिक्षा के बिगड़ने से व्यवहार बिगड़ता है। जैसे अन्न के लिए उत्तम कृषि की आवश्यकता होती है उसी प्रकार सभ्य एवं संस्कृत समाज के निर्माण के लिए उत्तम शिक्षा की आवश्यकता है।

आज देश में दोनों व्यवसाय दुर्दशा को प्राप्त हो रहे हैं। आज शिक्षा का उद्देश्य सभ्य और संस्कृत मनुष्य का निर्माण नहीं रह गया है। आज शिक्षा की कसौटी अर्थोपार्जन का सामर्थ्य बन गया है। हम ऐसी ही शिक्षा बच्चों को दे रहे हैं। पहले शिक्षा हमारे अधीन थी हम क्या पढ़ें, कहाँ पढ़े, किससे पढ़ें? ये विकल्प हमारे पास थे परन्तु आज हमारे पास कोई भी विकल्प शेष नहीं बचा है। शिक्षा का पाठ्यक्रम, स्थान और अध्यापक सरकार निश्चित करती है। हमारे बच्चों को तो केवल पढ़ना होता है। सरकार भी दो प्रकार की है, समाज भी दो प्रकार का है, अतः इस देश की शिक्षा भी दो प्रकार की है। सरकार को चुनने बनाने वाला समाज गरीब, पिछड़ा, अपठित और अपनी भाषा परम्परा वाला है परन्तु सरकार चलाने वाला अधिकारी वर्ग एक अभिजात समाज का प्रतिनिधित्व करता है और उसकी योजना और कार्य पद्धति भी उसी वर्ग के लिए होती है।

आज साधनों के आधार पर दो प्रकार का समाज है और समाज में दो प्रकार की शिक्षा है। समाज का एक वर्ग निर्धन, अशिक्षित, पिछड़ा हुआ है, उसके लिए सरकार ने राजकीय विद्यालय, प्राथमिक स्तर से महाविद्यालय स्तर तक खोले हैं। इसमें भी प्राथमिक स्तर से माध्यमिक स्तर तक यह विभाजन बहुत गहरा है। जिस माता-पिता के पास थोड़े से भी पैसे हैं वह अपने बालक को राजकीय विद्यालयों में नहीं पढ़ाना चाहता और ऋण लेकर भी अपने बच्चों को निजी संस्थानों में शिक्षा दिलाने को उत्सुक रहता है। समाज में दूसरी तरह की शिक्षा जिसे हम पब्लिक स्कूलों के रूप में जानते हैं, इसमें सम्पन्न वर्ग के बच्चे पढ़ने आते हैं। ये दोनों वर्ग समाज में खाई बढ़ाने का काम करते हैं। इनके अन्तर को समझने के लिए एक कसौटी महत्त्वपूर्ण है, इन विद्यालयों में काम करने वाले अध्यापक अपनी नौकरी तो सरकारी स्कूल में करने की इच्छा रखते हैं परन्तु अपने बच्चों को वे पब्लिक स्कूलों में पढ़ाते हैं। इन दोनों प्रकार के विद्यालयों में शिक्षा का अन्तर बहुत है। राजकीय विद्यालयों में बच्चे मातृभाषा में शिक्षा लेते हैं वहीं पर पब्लिक स्कूल के बच्चे अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करते हैं। वहाँ का रहन-सहन, खान-पान अंग्रेजी वातावरण लिये रहता है। बच्चे के अंग्रेजी बोलने से माता-पिता का सीना गर्व से फूल जाता है। इसके विपरीत राजकीय विद्यालय में पढ़कर देसी भाषा बोलता है, देसी वेशभूषा पहनता है। देसी भोजन करता है, वह समाज में पिछड़ा, गंवार, असभ्य समझा जाता है। इस प्रकार ये विद्यालय प्रारम्भ से ही समाज को दो भागों में बाँट देते हैं।

पब्लिक स्कूलों में पढ़े बच्चों की उच्च शिक्षा अंग्रेजी में होती है, उसे अंग्रेजी पढ़ने का, बोलने का लाभ मिल जाता है परन्तु देसी बच्चा अंग्रेजी में पिछड़ने के कारण उच्च शिक्षा से वञ्चित रह जाता है, हताशा में पढ़ाई छोड़ देता है या आत्महत्या कर लेता है। इस तरह देश में दो स्थायी वर्ग बनते जा रहे हैं। सरकारी विद्यालयों में पढ़ाई के स्तर की बात करना ही व्यर्थ है। प्रथम तो सरकारी स्कूलों के अध्यापक और सरकारी विभागों की तरह पढ़ने-पढ़ाने में रुचि ही नहीं रखते। ऊपर से सुधार के नाम पर आठवीं कक्षा तक बालक को अनुत्तीर्ण नहीं किया जाता। फिर कोई अध्यापक बालक को न पढ़ने पर, पाठ स्मरण न करने पर, गृह कार्य न करने पर, कक्षा में अनुशासनहीनता करने पर, अनुपस्थित रहने पर, दण्डित करना तो दूर अध्यापक बालक को डांट भी नहीं सकता। डांट को प्रताड़ना समझा जाता है। प्रताड़ना करना अपराध है। अध्यापक द्वारा बालक को डांटने पर उसे अपनी सेवा से निष्कासित होना पड़ सकता है। ऐसी स्थिति में राजकीय विद्यालयों में अध्ययन-अध्यापन का क्या स्तर होता है, इसकी कल्पना की जा सकती है। परीक्षा का अर्थ ही कुछ नहीं रहता फिर भी इन विद्यालयों के छात्र माध्यमिक शिक्षा मण्डल की परीक्षाओं में बड़ी संख्याओं में अनुत्तीर्ण होते हैं। दिल्ली के उदाहरण से पूरे देश की परिस्थिति समझना सरल होगा। दिल्ली के विद्यालय के अध्यापक ने बताया कि गत वर्ष शीला दीक्षित के मुख्यमन्त्रित्व के काल में सरकार ने विचार किया राजकीय विद्यालयों के गिरते हुए परीक्षा परिणाम को देखकर इन विद्यालयों को

निजी संस्थाओं को देने का विचार किया था, तब राजकीय विद्यालय के अध्यापकों ने खतरा भाँप कर अपने परीक्षा परिणाम सुधार लिये किन्तु कैसे ये परीक्षा परिणाम सुधारे यह जानने योग्य है। जब अगले वर्ष दसवीं और ऊपर की परीक्षायें होने लगी तब विद्यालय के प्राचार्य से अध्यापक तक सभी ने पूरे परिश्रम से छात्रों को नकल कराई और राजकीय विद्यालयों के परीक्षा परिणाम सुधार लिया। इससे अच्छा शिक्षा स्तर सुधारने का प्रकार और क्या हो सकता है? इन विद्यालयों में पढ़े लोगों के सरकार के पास आरक्षण का मार्ग है जिससे जीवन में कभी न पढ़ पाने के अपराध बोध से पीड़ित नहीं होंगे। हाँ जो इस आरक्षण के सरल मार्ग से वञ्चित रह गये वे जीवन भर मेहनत मजदूरी करने के लिए बाध्य हैं।

दूसरी ओर निजी विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों में प्रतियोगिता इतनी अधिक है कि वे पिचानवे प्रतिशत से भी अधिक अङ्क लाने पर भी पाठ्यक्रमों में प्रवेश नहीं मिल पाता, यहाँ भी पढ़ाई के नाम पर दूसरी प्रकार का अत्याचार बालकों पर होता है। आज हर माता-पिता चाहता है कि उसका बच्चा बोलना सीखे तो अंग्रेजी में ही बोले। उसके मुख से हिन्दी या मातृभाषा के शब्द माता-पिता को अपमान जनक लगते हैं। कुत्ते को डोगी कहने से माता-पिता को बच्चे के साथ कुत्ते का स्तर भी ऊँचा लगने लगता है। आज ऐसे माता-पिता हैं जिन्हें यह गौरव प्राप्त है कि उनके माता-पिता ने अंग्रेजी में सोचना, बोलना सिखाया है। उनके बालक गर्व से कहते हैं मुझे हिन्दी पढ़नी या बोलनी नहीं आती।

इन विद्यालयों में अपने बच्चों को पढ़ाने वाले माता-पिताओं की एक और कठिनाई है। पब्लिक स्कूलों में बच्चों को पढ़ाने वाले माता-पिता हर बच्चे से ये अपेक्षा करते हैं कि उनका बच्चा कक्षा में प्रथम आना चाहिए। इसके लिए बच्चे पर कितना भी तनाव डालने में संकोच नहीं करते। प्रातः काल से सायं काल तक बालक इसी युद्ध में रहता है कि उसे कक्षा में प्रथम आना है। यदि कक्षा में सत्तर बच्चे हैं तो एक प्रथम होगा तो एक सत्तरवाँ भी होगा परन्तु माता-पिता इस परिस्थिति को समझने के लिये तैयार नहीं, वे अपने सामर्थ्य से अधिक धन व्यय कर बच्चे को ट्यूशन पढ़ाते हैं। बच्चे विद्यालय, ट्यूशन, गृहकार्य के बीच इतना उलझ जाते हैं कि उन्हें खाने, खेलने का अवसर ही नहीं मिलता। वह मैगी, चॉकलेट खाता और कोका कोला पीकर बड़ा हो जाता है। बच्चे के शारीरिक विकास से, रोग को दूर करने से, उसके स्वस्थ रहने से माता-पिता को कुछ लेना-देना नहीं होता।

बच्चों के सामने जो लक्ष्य रखा जाता है वह है धन कमाना, जिस दिन वो उत्पन्न हुआ और बड़ा होने तक उसे वही बताया जाता है, वैसे ही उदाहरण दिये जाते हैं, पड़ोसी के बच्चे ने ये नौकरी प्राप्त की है, उसे इतने लाख रुपये मिलते हैं, तुझे उससे अधिक कमाने हैं। इस दौड़ में क्या छूट गया, इसका हमें ध्यान ही नहीं आता। माता-पिता हर समय उसकी कमजोरी स्मरण कराते रहते हैं। वह भी अपने से कमजोर बच्चों को तंग करके प्रसन्न होता है। बच्चे को पारिवारिक, सामाजिक वातावरण से माता-पिता बहुत दूर कर देते हैं। परिवार में सम्बन्धी मित्र आने पर माता-पिता बच्चे को उनसे मिलाने, उनकी सेवा करने, उनसे परिचय कराने के स्थान पर बच्चों को पढ़ने के नाम पर अतिथियों से दूर ही रखते हैं। वे लोग इनसे परिचित ही नहीं हो पाते तो प्रणाम करना, विनम्र व्यवहार करना, सेवा करना, सभ्य संस्कृत बनने के अवसर बच्चों के जीवन से समाप्त हो जाते हैं।

ऐसी शिक्षा में बच्चा देखता है माता-पिता उसे रिश्वत देकर बड़े संस्थानों में पढ़ाते हैं, जो बच्चे सिफारिश, रिश्वत और आरक्षण जैसी बैसाखियों से आगे बढ़ते हैं उनमें विपरीत विषम परिस्थितियों से मुकाबला करना नहीं आता। बच्चे परिवार में अकेले और सुविधाजीवी हो जाते हैं, उनमें सहनशीलता का अभाव हो जाता है। समूह में रहकर मनुष्य सहनशील बनता है परन्तु आजकल बच्चे सहनशीलता के अभाव में आत्महत्या कर लेते हैं या माता-पिता के विरोधी बन जाते हैं। आजकल की पब्लिक स्कूल की शिक्षा और जीवन शैली मनुष्य को अभाव में जीना नहीं सीखाती। इस कारण इन बच्चों के मन में गरीबों, निर्धनों के प्रति सहानुभूति के स्थान पर घृणा के भाव भरे जाते हैं। गरीबी एक परिस्थिति है, यह किसी के भी जीवन में आ सकती है। हमारे पब्लिक स्कूल गरीबों के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करने के स्थान पर उनके मन में उनके प्रति घृणा उत्पन्न करते हैं। बहुत दिन पहले राज्यसभा सांसद और नागपुर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश धर्माधिकारी ने एक लेख में वर्तमान व पुरानी शिक्षा के अन्तर को समझाते हुए एक लेख लिखा था- एक बार एक स्थान पर बाजार में एक गाड़ी आकर रुकी, उसमें से दो बच्चे और उनकी सम्भ्रान्त दीखने वाली माँ उतरी, बच्चों ने आइसक्रीम खाकर अपना कप कूडेदान में फेंक दिया, बच्चों ने देखा कुछ बच्चे दौड़े-दौड़े वहाँ पर आये, उन्होंने फेंके कप उठाये और बची हुई आइसक्रीम को चाटने लगे, कार से उतरने वाले बच्चों ने यह देखकर अपनी माँ से इस विषय में कुछ जानना चाहा, तब माँ डाँटते हुए कहा ये गन्दे लोग हैं, इनसे बात नहीं करनी चाहिए। धर्माधिकारी ने लिखा है यह घटना देखकर उन्हें अपना बचपन याद आ गया, उन्होंने

लिखा मेरे साथ मेरा गरीब साथी पढ़ता था, उसके साथ में गिल्ली-डण्डा खेलता था। उसके शरीर पर कभी निक्कर तो कभी कमीज फटी रहती थी। खेल के बाद जब हम दोनों घर पहुँचते थे तब मेरी माँ दोनों को प्यार से एक साथ बैठाकर रोटी खिलाती थी, हमारे मन में कभी ये भाव नहीं आया, ये बालक किसी भी तरह हमसे नीचा है। यही अन्तर हमारी शिक्षा ने और आधुनिक माता-पिताओं ने हमारे बच्चों में उत्पन्न किया है।

हमारे बच्चे समाज की पुरानी वेशभूषा का त्याग तो कर ही रहे हैं परन्तु उनके मन में अपनी भाषा के साथ वेशभूषा से भी घृणा होती है। कॉलेज व पब्लिक स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों की दृष्टि में धोती-कुर्ता पहनने वाले माता-पिता पिछड़े व गंवार लगते हैं। एक बार गुरुकुल में पढ़े पिता के बेटा धोती पहनने वाले को कार्टून समझता और कहता था। गुरुकुल में पढ़े स्नातक धोती पहनने वाले पिता की पुत्री विवाह के लिए एक लड़के को इस कारण पसन्द नहीं करती क्योंकि वह हिन्दी पढ़ाता है। इस प्रकार हमारे बच्चे इस शिक्षा और वातावरण के प्रभाव से अपनी सभ्यता, संस्कृति, भाषा, वेशभूषा से कितने दूर जा चुके हैं, यह देखकर देश के भविष्य के प्रति चिन्तित होना स्वाभाविक है। परन्तु दु:ख की बात यह है कि ऐसी चिन्ता करने वाले लोगों की संख्या गिनती की रह गई है। उनके रोने-चीखने का इस प्रगतिशील समाज पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

हमारे बच्चे विद्यालयों में, समाज में जो परिवर्तन देखते हैं उनके प्रति आकर्षित होते हैं और उनका अनुकरण करने लगते हैं। इस अनुकरण में एक ओर संकट समाज और देश में अपने पंजे फैला रहा है, वह है नई पीढ़ी में व्यसनों का चलन बहुत तेजी से बढ़ रहा है। जो बच्चे घर के संस्कार और परम्पराओं के कारण शाकाहारी और निर्वव्यसनी थे वे इन विद्यालयों व महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में, प्रगतिशीलता व आधुनिकता के नाम पर इन व्यसनों में पड़ रहे हैं। बात केवल माँस, मछली, अण्डा, शराब तक सीमित नहीं है। आज तम्बाकू, गुटका, शराब के साथ नये-नये व्यसन गांजा, अफीम, चरस इन पुराने नामों को पीछे छोड़ने वाले कोलेफोर्निया पाँच सौ जैसे व्यसन जिनकी दो बूदों के लिए एक-एक हजार रुपये देने होते हैं, उनका भी प्रचलन बढ़ रहा है। व्यसनों की अति होने का उदाहरण पंजाब सरकार का वक्तव्य है जिसमें नई पीढ़ी के नवयुवक नब्बे प्रतिशत लोग इन दवाओं के आदी हो चुके हैं। मादक द्रव्यों का व्यापार धन कमाने की लालसा के कारण दिनोंदिन बढ़ रहा है और नवयुवक निराशा, हताशा, कुण्ठा से ग्रसित होकर इनकी शरण में जा रहा है। समाज और सरकार को चिन्ता नहीं, माता-पिता, परिवार इस सबके सामने विवश और असहाय दिखाई देते हैं। इसका मुख्य कारण बच्चे समझते हैं उनपर कोई ध्यान नहीं दे रहा है। उनके लिए किसी के पास समय नहीं है। पुराने समय में संयुक्त परिवार के चलते बड़े लोगों का साथ बच्चों को मिल जाता था परन्तु आज एकल परिवार के चलते माता-पिता या तो अपनी आर्थिक उधेड़ बुन में रहते हैं या समय है तो मनोरञ्जन के लिये किसी पार्टी, समाज में स्थान बनाने के लिए घर से बाहर समय बिताते हैं तब बच्चों को कौन सम्भाले, गरीब के बच्चों को कोई सम्भालने वाला नहीं, अमीर के बच्चों को सम्भालने का माता-पिता के पास समय नहीं। देश के युवक का भविष्य क्या बनेगा, यह ईश्वर ही जानता है। समाज में बड़े होने की योग्यता है, कौन कितने नियम तोड़ सकता है, जो जितने नियम तोड़ सकता है वह समाज की और अपनी दृष्टि में उतना ही बड़ा है। बच्चा समाज में जो होता हुआ देखता है, उसी का अनुसरण करता है।

जो प्राकृतिक सत्य है, उसे भाषा, शिक्षा, विज्ञान बदल नहीं सकता। बच्चों को बनाना है तो माता-पिता, गुरु तीनों की आवश्यकता है। घर, समाज, सरकार तीनों ही उसके लिए उत्तरदायी हैं। अत: शास्त्र ने कहा है-

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद।

- धर्मवीर

नवीन प्रकाशन का परिचय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित वैदिक पुस्तकालय के द्वारा प्रेरणास्पद व भक्त्योत्पादक **कैलेण्डरों** व **स्टीकरों** का नवीन प्रकाशन किया गया है।

कैलेण्डर - (क) महर्षि दयानन्द की शिक्षाएँ- इसमें महर्षि दयानन्द जी द्वारा रचित धार्मिक-व्यवहार से लेकर ईश्वर-भक्ति तक ले जाने वाले प्रेरक-वाक्यों का संग्रह किया गया है।

(ख) सन्ध्या सुरभि- इसमें महर्षि दयानन्द जी की भक्त्योपादक वाक्य-रचना का आधार लेकर वैदिक सन्ध्या के भावों को सुरभित किया गया है।

(ग) गायत्री मन्त्र- इसमें गायत्री मन्त्र के अनेक विशेष अर्थों के द्वारा ईश्वर के गुणों के प्रति प्रेरित किया गया है। साथ में मन्त्र का भाव कविता रस में भी बाँधा गया है।

स्टीकर- इसमें परमात्मा के मुख्य नाम **ओ३म्** व महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के चित्र को विशेषत: प्रकाशित किया गया है।

सभी आर्यजनों को ये नवीन प्रकाशन अवश्य ही लाभदायक सिद्ध होंगे। **(आवरण पृष्ठों पर अवलोकन करें।)**

स्वरूपेऽवस्थानम्

- स्वामी विष्वङ्

जब से सृष्टि बनी है तब से लेकर आज तक मनुष्य सुख की गवेषणा करता हुआ आ रहा है और भविष्य में भी करता रहेगा। जब तक सृष्टि रहेगी तब तक गवेषणा भी चलती रहेगी। कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जिसे गवेषणा का विषय मनुष्य ने नहीं बनाया हो, कोई ऐसा क्षेत्र भी नहीं है, जिसे अपना क्षेत्र नहीं बनाया हो। मनुष्य ने वह सब कुछ किया है, जो उसे करना चाहिए। ऐसा ही सब को प्रतीत होता है। प्रत्येक क्षेत्र से और प्रत्येक पदार्थ से मनुष्य को लाभ प्राप्त हुआ है, हो रहा है और भविष्य में भी होता रहेगा। मनुष्य ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से बहुत लाभ उठाया है। चन्द्रमा, मंगल आदि ग्रहों पर अपने यन्त्रों को भेज कर वहाँ से भी लाभ प्राप्त कर रहे हैं और न जाने कहाँ-कहाँ यन्त्रों को भेज रहे हैं और भेजेंगे। इतना ही नहीं निकट भविष्य में मनुष्यों को भी अन्य ग्रहों में बसाने की योजना भी बना रहे हैं। कहीं पर जाने-आने में कोई आपत्ति नहीं है और अपनी पृथिवी से अन्यत्र निवास करने में भी कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। क्योंकि ऐसा जो भी करते हैं, उन सब का उद्देश्य सुख प्राप्त करना ही रहता है और सुख प्राप्त करने के अधिकार को कोई किसी से छीन भी नहीं सकता। प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी रूप में (उत्तम, मध्यम, निम्न प्रकार के) सुख प्राप्त कर ही रहा है और आगे भी करता रहेगा। मनुष्य हो कर सुख प्राप्त न करे, ऐसा नहीं हो सकता। यह सब जानते हैं कि मनुष्य बिना सुख के नहीं रह सकता, हाँ सुख न्यून या अधिक अवश्य हो सकता है।

सुख की गवेषणा करना या सुख प्राप्त करना या सुखी हो जाना, यह बहुत बड़ी बात नहीं है। क्योंकि ऐसा करना मनुष्य का स्वभाव है। परन्तु जिस सुख की गवेषणा मनुष्य करता है या जिस सुख को प्राप्त करता है या जिस को पा कर सुखी होता है, वह सुख मनुष्य को तृप्त करने वाला, शान्त करने वाला, प्रसन्न रखने वाला, निश्चिन्त रखने वाला, भय रहित करने वाला और स्वतन्त्र करने वाला होना चाहिए। यद्यपि सुख मनुष्य को तृप्त, शान्त, प्रसन्नता आदि प्रदान करता तो है परन्तु सदा नहीं कर पाता है। इसी कारण मनुष्य सुखों को बदलता रहता है। सुखों को बदल-बदल कर दु:खी होता जा रहा है। मनुष्य की अतृप्ति, अशान्ति, अप्रसन्नता आदि ने मनुष्य को उद्विग्न कर दी है। मनुष्य उद्विग्न हो कर अलग-अलग सुखों के पीछे दौड़ता हुआ सुध-बुध को ही खो बैठा है। सुखों के पीछे दौड़ना अनुचित नहीं है परन्तु मनुष्य सारी मर्यादाओं को एक किनारे रख कर किसी भी रीति को अपनाता जा रहा है। मनुष्य के सामने माता-पिता, परिवार के अन्य सदस्य, पड़ोसी, गुरु, अध्यापक, अनुभवी, मित्र, समाज, राष्ट्र कुछ भी दिखाई नहीं देता है, केवल सुख ही दिखाई देता है। और जो सुख दिख रहा है, वह भी मनुष्य को पूर्ण तृप्त, शान्त, प्रसन्न नहीं करने वाला है। संसार के सुख देने वाले पदार्थ कितने भी प्रकार के हों और कितने भी हों। सभी पदार्थ मनुष्य को अतृप्ति, अशान्ति आदि ही प्रदान करेंगे।

मनुष्य की यह सुख की गवेषणा, जो आदि सृष्टि से चली आ रही है और अनन्त सृष्टियों तक चलती रहेगी। क्या यह गवेषणा व्यर्थ हो रही है? साधारण मनुष्य से ले कर बड़े-बड़े वैज्ञानिकों तक एक समान गवेषणा कर रहे हैं। क्या ये सब व्यर्थ गवेषणा कर रहे हैं? केवल लौकिक-जगत् में ही ऐसी गवेषणा चलती हो, ऐसा नहीं है। आध्यात्मिक-जगत् में भी चलती है। क्या साधु, क्या सन्त, क्या योगाभ्यासी सभी शाश्वत सुख की गवेषणा में लगे हुए हैं। जिसे पा कर पूर्ण तृप्त, शान्त, प्रसन्न होना चाहते हैं। संसार का प्रत्येक मनुष्य, चाहे लौकिक हो या आध्यात्मिक, चाहे किसी भी मत, पन्थ आदि का हो, सब एक समान शाश्वत सुख की गवेषणा में लगे हुए हैं। संसार में दो प्रकार के वर्ग दिखाई देते हैं एक वर्ग किसी को पाने, किसी को त्यागने, किसी को अच्छा, किसी को बुरा कहने में लगा हुआ है। दूसरा वर्ग ठीक पहले वर्ग के विरोध में लगा हुआ है। उदाहरण असंख्य हो सकते हैं। जैसे कोई ईश्वर है कहता है, तो कोई नहीं, कोई मोक्ष है कहता है, तो कोई नहीं कहता है। सब स्थितियों में विकल्प दिखाई दे रहा है, परन्तु सुख के सन्दर्भ में कोई विकल्प दिखाई नहीं दे रहा है। सभी सुख चाहते हैं। सभी सुख से पूर्ण तृप्त, शान्त, प्रसन्न होना चाहते हैं, इसमें अविकल्प है। अर्थात् मनुष्य मात्र की यही भावना है कि पूर्ण तृप्ति, शान्ति, प्रसन्नता आदि प्राप्त हो।

मनुष्य मात्र की इच्छा, प्रयत्न, ज्ञान आदि एक ही प्रकार से प्रवृत्त हो रहे हैं, तो इसका अभिप्राय यह निकलता है कि पूर्ण तृप्ति, शान्ति, प्रसन्नता आदि हैं और प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशीलों को प्राप्त भी हो जायेंगी। यदि पूर्ण तृप्ति आदि नहीं होतीं, तो आदि सृष्टि से ले कर आज तक कोई

न कोई मनुष्य अपने प्रयत्न को रोक देता, अर्थात् कभी प्रयत्न नहीं करता। परन्तु ऐसा आज तक किसी ने नहीं किया, जब आज तक नहीं किया तो आगे भी नहीं करेंगे। क्योंकि अनादि काल से चली आ रही इस सृष्टि में अब तक किसी ने नहीं किया, तो आगे क्यों कर करेगा? असम्भव था इसीलिए ऐसा नहीं किया और असम्भव होने से आगे भी नहीं होगा। इन सब बातों का निष्कर्ष यह निकलता है कि पूर्ण तृप्ति, शान्ति, प्रसन्नता आदि विद्यमान हैं और उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए आज भी कोई इस दिशा में प्रवृत्त हो कर पूर्ण तृप्ति आदि को पाना चाहता है, तो पा सकता है। मनुष्य पूर्ण तृप्ति को कैसे पा सकता है? उसके उपाय क्या-क्या होते हैं? इसकी जानकारी न होने से अथवा ठीक प्रकार की जानकारी न होने से अरबों की संख्या में मनुष्य अनेकों दु:ख-कष्ट भोग रहे हैं और इसका उचित समाधान नहीं निकाला जाये, तो आगे भविष्य में भी दु:ख भोगते रहेंगे। पूर्ण तृप्ति, शान्ति आदि का उचित समाधान कहाँ से प्राप्त होगा? इसके लिए गवेषणा करने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि प्राचीन काल से ऋषियों, महर्षियों, मुनियों ने चारों वेदों, उपवेदों, ब्राह्मण-ग्रन्थों, अङ्ग, उपाङ्गों आदि सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय के अनुसार चल कर पूर्ण तृप्ति, शान्ति आदि को प्राप्त किया है। हम भी उसी प्रकार चल कर प्राप्त कर सकते हैं। यही एक मात्र उपाय है और अन्य कोई उपाय दिखाई नहीं देता है।

महर्षि पतञ्जलि ने वैदिक वाङ्मय के अनुरूप पूर्ण तृप्ति, शान्ति आदि को पाने का सम्पूर्ण विधि-विधान योग शास्त्र में वर्णन किया है। महर्षि पतञ्जलि कहते हैं कि मनुष्य मन में स्थित होकर सम्पूर्ण कार्यों का सम्पादन करता जा रहा है। अर्थात् मनुष्य स्वयं (आत्मा) को मन से अलग अनुभव न करता हुआ मन को ही आत्मा मान रहा है। इसलिए आत्मा को मन में आरोपित कर लेता है। मानो आत्मा को मन में स्थापित कर दिया हो। इसलिए मनस्थ (मन में स्थित) हो कर ही कार्यों को कर रहा है और मन ही समस्त कार्यों को करता है, ऐसा अनुभव करता है। इस कारण मनुष्य अत्यधिक दु:ख भोग रहा है। मनुष्य स्वस्थ (स्वयं में स्थित) नहीं है अर्थात् अस्वस्थ (आत्मा से भिन्न मन में स्थित) है। इसलिए दु:खी है और जब तक अस्वस्थ रहेगा तब तक दु:खी ही रहेगा। परन्तु स्वस्थ (स्वयं आत्मा में स्थित) होने पर दु:ख रहित हो कर सुखी हो जायेगा। इसके लिए महर्षि पतञ्जलि ने कहा है **'स्वरूपेऽवस्थानम्'** अर्थात् जब जीवात्मा की स्थिति अपने स्वरूप में होती है तब आत्मा स्वस्थ होता है। स्वस्थ आत्मा ही पूर्ण तृप्त, शान्त, प्रसन्न रह सकता है। आत्मा को अपने आप में स्थित होने के लिए बहुत कुछ करना पड़ता है। ऐसा क्या करना पड़ता है, जिससे आत्मा स्वस्थ हो? इसका समाधान समाधि है, समाधि लगाने पर आत्मा को आत्म-ज्ञान होता है। आत्मा को अपने वास्तविक स्वरूप का बोध जब हो जाता है तब आत्मा स्वयं में स्थित हो कर प्राणि मात्र को देखता है। ऐसी स्थिति में आत्मा को अन्य आत्माएँ स्व-आत्मवत् प्रतीत होती हैं। जिस-किसी भी मनुष्य के साथ जब कभी भी व्यवहार करना पड़े, तो आत्मा अन्यों को स्व-आत्मवत् अनुभव करता हुआ ही व्यवहार करेगा। अनुचित व्यवहार कभी नहीं कर पायेगा।

आत्मा को स्वस्थ करने के लिए समाधि लगानी है और समाधि के लिए तत्त्वज्ञान की आवश्यकता होती है। ईश्वर-तत्त्व का और प्रकृति (सत्त्व, रज, तम) तत्त्व का यथार्थ बोध के साथ-साथ जीवात्मा को जीवात्मा का भी यथार्थ बोध करना पड़ता है। क्योंकि यथार्थ बोध (विवेक) से ही वैराग्य होता है और वैराग्य से समाधि की उपलब्धि होती है। विवेक, वैराग्य साधारणता से प्राप्त नहीं हो पाते हैं। इसके लिए मनुष्य को निरन्तर अभ्यास करना पड़ता है। पूर्व में अर्जित अविद्या को नष्ट करने के लिए और वर्तमान में नूतन अविद्या उत्पन्न न हो, उसके लिए अभ्यास करना पड़ता है। पूर्व में अर्जित विद्या को बनाये रखने के लिए और नूतन विद्या को पाने के लिए अभ्यास करना पड़ता है। जिस प्रकार से अविद्या और विद्या के विषय में अभ्यास करना है, उसी प्रकार पूर्व में अर्जित कुसंस्कारों को कमजोर, अप्रभावी-सुप्त और नष्ट होने के लिए तथा पूर्व अर्जित सुसंस्कारों को दृढ़-बलवान बनाये रखने के लिए और नये-नये सुसंस्कार बनाने के लिए अभ्यास निरन्तर करना पड़ता है। जहाँ मनुष्य को विद्या की वृद्धि निरन्तर करनी है वहाँ पाप कर्मों को सर्वथा त्याग करते हुए पुण्य कर्मों को निष्काम कर्मों में परिवर्तित करके निरन्तर परोपकार करते रहना पड़ता है। तत्त्वज्ञान और निष्काम-कर्मों के साथ-साथ निरन्तर ईश्वरोपासना भी करनी पड़ती है। संसार में तत्त्वज्ञानियों को, निष्काम-कर्मियों को और ईश्वरोपासकों को देखा जाता है। तत्त्वज्ञानी-तत्त्वज्ञान में, निष्कामकर्मी-निष्काम कर्म में, ईश्वरोपासक-ईश्वरोपासना में निमग्न होते हुए तो देखा जाता है। परन्तु तीनों (तत्त्वज्ञान, निष्काम कर्म, ईश्वरोपासना) को समन्वय करके चलने वाले विरले ही होते हैं। अन्यथा एकांगी विषय में ही पारंगत देखे जाते हैं।

तत्त्वज्ञान, निष्काम कर्म, इश्वरोपासना, इन तीनों विषयों का समन्वय करते हुए मन को विषयों से हटा कर आत्मा और परमात्मा में निरन्तर लगाने का अभ्यास करना पड़ता है। मन को आत्मा व परमात्मा में लगाने के लिए विषयों में अतृप्ति, अशान्ति आदि की विद्यमानता को निरन्तर अनुभव

करना पड़ता है। जिससे मन विषयों में दुःख देखने लगे और विषयों में तृष्णा न बना पाये। क्योंकि तृष्णा ही मन को वृत्तियों (विभिन्न विचारों) में उलझाए रखती है, जिससे मन एकाग्र व निरुद्ध नहीं हो पाता है। बिना एकाग्रता व निरुद्धता के आत्मा स्वस्थ (स्वयं में स्थित) नहीं हो सकता, आत्मा की अस्वस्थ अवस्था में ही अतृप्ति, अशान्ति, अप्रसन्नता मिलती है, जो मनुष्य कभी नहीं चाहता है। तृष्णा को हटाने पर ही मन एकाग्र व निरुद्ध हो पाता है, परन्तु तृष्णा को हटाना सरल नहीं है। क्योंकि जन्म-जन्मान्तरों से चले आ रहे असंख्य प्रतीत होने वाले कुसंस्कार मन में अंकित हैं। कुसंस्कारों के साथ-साथ मूर्खता रूपी अविद्या भी मन में भरी हुई है। कुसंस्कारों व अविद्या को हटाने के लिए कितना पुरुषार्थ करना होता है, यह आध्यात्मिक मार्ग में चलने वाले साधक ही जान सकते हैं। मन को एकाग्र व निरुद्ध करने का पुरुषार्थ लौकिक पुरुषार्थ के समान नहीं है। लोक में कितनी भी ऊँचाई को प्राप्त करने वाले क्यों न हों, उनमें अविद्या बनी रहती है। चाहे वे वैज्ञानिक भी क्यों न हों, परन्तु आध्यात्मिक मार्ग में चलने वाले वैज्ञानिकों के समान पुरुषार्थ करके उन जैसी तृप्ति तो पा सकते हैं। किन्तु **'स्वरूपेऽवस्थानम्'** की स्थिति को पा नहीं सकते। स्वयं में स्थित होने की स्थिति तो अविद्या को हटाने पर ही आ सकती है।

यहाँ पर **'स्वरूपेऽवस्थानम्'** को दो प्रकार से समझ सकते हैं। स्वरूपेऽवस्थानम् का एक अर्थ यह है कि जब मन सभी वृत्तियों से रहित (निरुद्ध अवस्था युक्त) हो जाता है तब जीवात्मा स्वयं में (अपने निज रूप में विद्यमान) स्थित होता है, जिस प्रकार मोक्ष में होता है। मोक्ष में आत्मा वृत्तियों से रहित होता है, क्योंकि वहाँ भौतिक मन नहीं रहता और अविद्या नहीं होती है। मोक्ष के समान ही समाधि में आत्मा वृत्ति रहित होता है। इस कारण आत्मा स्वस्थ होता है। ऐसी स्थिति में आत्मा पूर्ण तृप्त, शान्त होता है। स्वरूपेऽवस्थानम् का दूसरा अर्थ यह है कि जब मन सभी वृत्तियों से रहित होता है तब जीवात्मा ईश्वर के स्वरूप में स्थित होता है। ऐसी स्थित में भी जीवात्मा पूर्ण तृप्त, शान्त होता है। जैसे मोक्ष में होता है वैसे शरीर अवस्था में समाधि लगा कर भी होता है। यहाँ पर कोई यह प्रश्न उपस्थित कर सकता है कि आत्मा स्वयं में स्थित हो, तो कोई बात नहीं, परन्तु जैसे मन में स्थित होने से अतृप्ति, अशान्ति मिलती है। उसी प्रकार ईश्वर में स्थित होने से भी अतृप्ति, अशान्ति मिलनी चाहिए? क्योंकि दोनों स्थितियों में आत्मा स्वयं में स्थित नहीं है। इसका समाधान यह है कि मन में स्थित होने में और ईश्वर में स्थित होने में अन्तर यह है कि मन में स्थित होने के पीछे अविद्या जुड़ी हुई है और ईश्वर में स्थित होने के पीछे विद्या जुड़ी हुई है। इसलिए मन के साथ पूर्ण तृप्ति, शान्ति नहीं मिलेगी। यदि विद्या के साथ युक्त हो कर मन में स्थित हो जाये, तो पूर्ण तृप्ति मिल पायेगी? नहीं मिल पायेगी, क्योंकि मन में स्थित होकर वृत्ति रहित नहीं हो सकते और जब तक वृत्ति रहेगी तब तक मन निरुद्ध नहीं हो सकता। इसलिए महर्षि पतञ्जलि ने वृत्ति रहित होने के लिए निरुद्ध-अवस्था का विधान किया है। ऐसी स्थिति में ही आत्मा स्वयं में व ईश्वर में स्थित हो कर ही पूर्ण तृप्त, शान्त हो सकता है।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर **'मन्त्री परोपकारिणी सभा'** अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या -10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

IFSC - SBIN0007959

कुछ तड़प-कुछ झड़प

- राजेन्द्र जिज्ञासु

आदरणीय साधक जी की प्रतिक्रिया:- नवम्बर प्रथम के अंक में मान्य वियोगी हरि जी के ग्रन्थ 'हमारी परम्परा' के आर्यसमाज विषयक लेख पर हमारी ज्ञानवर्द्धक टिप्पणी पढ़कर आदरणीय रामकृष्ण जी साधक (वर्तमान में व्रतमुनि) ने गद्‌गद् होकर अपनी प्रतिक्रिया दी है। आपको 'वैदिक दर्शन का प्रभाव और आर्यसमाज' अत्यन्त विचारोत्तेजक व ठोस लगा। हम हृदय से उनका आभार मानते हैं। आप गत एक-दो वर्षों के आर्य सामाजिक पत्रों के अंक देख लीजिये। भूल-चूक से ही वैदिक सिद्धान्तों पर किसी पत्रिका में कोई खोजपूर्ण, रोचक, प्रेरक व मौलिक लेख किसी ने दिया होगा। परोपकारी के प्रत्येक अंक में वैदिक सिद्धान्तों पर पठनीय सामग्री दी जाती है। परकीय पत्रों में छपे आपत्तिजनक लेखों के सप्रमाण उत्तर दिये जाते हैं।

किसी भी पत्र को उठा लो, दो-चार क्रान्तिकारियों के नामों की तोता रटन मिलेगी। जिन्होंने वैदिक धर्म, दर्शन तथा आर्य विचारधारा के लिये तलवार, कटार के वार सहे, जिन्हें छुरे के स्वाद चखना पड़ा, जिन्होंने गोलियाँ खाईं, जो धर्म की बलिवेदी पर प्राण दे गये, उनके गीत कौनसी पत्रिका में छपे देखे? गत ५०-६० वर्षों से सैद्धान्तिक चर्चा, शंका-समाधान गौण हो गई है। चरित्र-निर्माण, राष्ट्र रक्षा सम्मेलन, महिला सम्मेलन ही हो रहे हैं। चरित्र गिर रहा है फिर विश्व में वैदिक विचारधारा की चर्चा कैसे सुनने को मिले?

तथापि पं. लेखराम के वंश का तप अपना रंग दिखा रहा है। आप स्वामी विवेकानन्द, श्री राजगोपालाचार्य, श्री रविन्द्रनाथ ठाकुर अथवा डॉ. राधाकृष्णन् के वेदान्त पर लिखे लेख व ग्रन्थ पढ़िये। एक का वेदान्त दूसरे से न्यारा है। मतैक्य है ही नहीं? ऐसा क्यों? यह पं. गुरुदत्त जी, आचार्य रामदेव जी, पं. गंगाप्रसाद जी, स्वामी दर्शनानन्द जी, पं. आर्यमुनि जी, पं. लेखराम जी, पं. रामचन्द्र देहलवी जी की लेखनी व वाणी का जादू काम कर रहा है।

श्री विश्वनाथ संचालक राजपाल एण्ड संस ने निधन से पूर्व अपनी कविताओं का एक बड़ा संग्रह प्रकाशित किया। उसका 'आर्य जगत्' साप्ताहिक में बहुत स्तुतिगान लोगों ने पढ़ा। उसी में यह छपा है कि 'जीव ब्रह्म का अंश है।' यह काव्य ग्रन्थ सम्मति के लिये प्राचार्य रमेशचन्द्र जी जीवन तथा इस लेखक के पास आया था। हमने इस अवैदिक विचार पर आपत्ति की, परन्तु और किसी को उस ग्रन्थ के अनार्ष विचार न अखरे। ऐसे अनार्ष विचारों पर चुप्पी साध लेने वाले लेखक पुरस्कार प्राप्त करने के लिए हर घड़ी तैयार मिलते हैं।

सब पौराणिक जयघोष लगाते हैं:- विश्व का कल्याण हो। प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व तो मिथ्या है, सब कुछ ब्रह्म ही ब्रह्म है फिर विश्व के कल्याण का अर्थ क्या? प्राणी कहाँ से आ गये?

यह आर्यसमाज के वैदिक दर्शन की छाप है। यह महात्मा नारायण स्वामी और आचार्य उदयवीर के तप का फल है।

उत्तर प्रदेश से तड़प-झड़प में उत्तर के लिए मूर्त्तिपूजा विषय पर एक युवक ने दूसरों के कई प्रश्न भेजे हैं। उस पुस्तक में मूर्तिपूजा है, महाभारत में मूर्तिपूजा है आदि-आदि। हमारे शास्त्रार्थ महारथियों के कथन की पुष्टि खुदाई वाले कर रहे हैं। **पन्द्रह सौ वर्ष से पुरानी कोई भी मूर्ति अभी तक तो मिली नहीं।** साने गुरुजी मूर्त्तियों को भोग लगाना व्यर्थ घोषित करके सनातन धर्म की नई व्याख्या कर रहे हैं। यह ऋषि दर्शन का प्रभाव नहीं तो क्या है? दो वर्ष पूर्व कल्याण में चार वेदों का चित्र छपा। क्यों जी! काशी शास्त्रार्थ में तो १८ पुराण, ब्राह्मण ग्रन्थ सभी वेद बताये गये थे या नहीं? कल्याण के एक अङ्क में कृष्ण महाराज को आँखें बन्द करके ध्यान में दिखाया गया। किसका ध्यान? जब कृष्ण स्वयं भगवान् थे तो फिर किसके ध्यान में मगन थे?

मित्रों! यह आर्य विचारधारा की दिग्विजय है। आर्यसमाज के संस्थावादी, मायाधारी इस वैचारिक क्रान्ति को क्या जानें? एक बार आर्यसमाज नया बांस में एक बहुत बड़े विद्वान् ने इस सेवक से पूछा- क्या सैमेटिक मत अब भी प्रकृति व जीव को उत्पन्न किया ही मानते हैं? क्या ये लोग अब भी जीव व प्रकृति को अनादि नहीं मानते? हमने कहा- यह पं. चमूपति का युग है। एक-एक मौलाना ये पंक्तियाँ गुनगुनाता है-

ख़ुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तकदीर से पहले
ख़ुदा बन्दे से ख़ुद पूछे बता तेरी रज़ा क्या है

अर्थात् विधाता प्रारब्ध बनाने से पहले प्रत्येक जीव से पूछे कि बता तू क्या चाहता है? क्यों जी! मानव देह पाने से पहले बन्दा (जीव) था तभी तो उसकी इच्छा पूछने की बात कही गई है। मौलाना महबूब अली का घोष सुनिये। वह लिखते हैं कि जीव तथा प्रकृति का अनादित्व न स्वीकार किया जावे तो कुरान वर्णित अल्लाह के सब नाम निरर्थक सिद्ध हो जाते हैं। कुरान ईश्वर को न्यायकारी, पालक, मालिक, स्रष्टा, दाता, दयालु व कृपालु मानता है। ये सब गुण, कर्म अनादि हैं। जीव अनादि है तभी तो प्रभु उनको न्याय देता आ रहा है। उन पर दया भी अनादि काल से करता है। प्रकृति अनादि है तो वह कुछ देता है। जिन्हें देता है वे भी अनादि हों। जीव व प्रकृति का मालिक कब से? अनादि काल से। यह ऋषि-दर्शन की अद्‌भुत छाप है अत: यह कहना, मानना व

जानना अनर्थकारी है कि आर्यसमाज की विचारधारा का संसार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

सपने में किसी ने बहुत सोना देखा तो खुदाई आरम्भ हो गई। तब जदयू के एक नेता ने टी.वी. पर कहा कि ऋषि दयानन्द ने इतना बड़ा ग्रन्थ (सत्यार्थ प्रकाश) अंधविश्वासों के उन्मूलन के लिए ही तो लिखा था। सरकार फिर भी अंधविश्वासों का लालन, पालन व पोषण कर रही है। ग्रह-उपग्रह गति करते हैं। यह अब ईसाई भी मानते हैं और मुसलमान भी। ईसाई, मुसलमान कभी कोर्ट में नहीं कहते कि हमारे दुष्कर्मों का फल शैतान को दो, वही पाप करवाता है। हम तो निर्दोष हैं। यह नई सोच ऋषि की देन है। आर्यसमाज के घुसपैठिये बाबू लोगों के कारण संसार में भ्रम फैला है कि आर्यसमाज के दर्शन का विश्व पर प्रभाव नहीं पड़ा।

श्री विरजानन्द जी का प्रश्न:- श्रीमान् विरजानन्द जी महर्षि के जीवन तथा पत्र-व्यवहार के गम्भीर विद्वान् हैं। आपने ऋषि जीवन की चर्चा छेड़ते हुए एक अच्छा प्रश्न उठाया है। पाठकों के लाभार्थ उस पर यहाँ भी विचार करना उपयोगी रहेगा। आपका कहना है कि जोधपुर में सितम्बर मास में आम कहाँ से आ गये?

आपने यह प्रश्न यूँ ही नहीं उठाया। महर्षि के विषपान की घटना को झुठलाने का षड्यन्त्र रचने वालों ने तब यह प्रचारित किया था कि ऋषि जी अधिक आम खाने से रुग्ण हुए। यही उनके निधन का कारण था। उस समय षड्यन्त्रकारियों के सेनापति प्रिं. श्रीराम शर्मा की चाल यही थी कि विषपान की घटना के मुख्य विषय को उलझाने के लिये उत्तर देने वाले को विषयान्तर करते जाओ। इस प्रयोजन से कभी आम चूसने की बात छेड़ी, कभी बैग से रुपये चुराने की, कभी रसोईये के नाम की, कभी सर नाहरसिंह के कथन की इत्यादि।

इस सेवक को वे जुण्डली विषयान्तर न कर सकी। हमें सन् १९५२ में पूज्य देहलवी जी ने यह सीख बहुत अच्छे ढंग से जँचा दी थी कि विषयान्तर होने से कभी सत्यासत्य निर्णय करने में आप सफल नहीं हो सकते सो यह नन्हीं कौन थी, नन्हीं कितनी थीं, नन्हीं वैश्या नहीं थी, नन्हीं की पालकी उठाने की कहानी या सर प्रतापसिंह की कहानियों के जाल में न फंसकर विष दिये जाने के ही प्रमाण पर अपनी लेखमाला को केन्द्रित करते रहे। अब श्री विरजानन्द जी को धन्यवाद ही देना चाहिये कि आपने झूठ की खड़ी की गई उस दीवार को ध्वस्त करने के लिए इस प्रश्न को उठाया है। यह ठीक है कि महर्षि आम की ऋतु में भी जोधपुर में थे। उनको आम भाते थे, यह चर्चा तो मिलती है परन्तु सितम्बर में आम कहाँ होते हैं। सितम्बर की घटना को जुलाई-अगस्त से जोड़ना तो- **अन्धे को अन्धेरे में बड़ी दूर की सूझी** जैसी बात है।

इस प्रसंग में उदीयमान सुयोग्य युवकों के लाभार्थ श्री पं. शान्तिप्रकाश जी तथा अमर स्वामी जी के दिशा निर्देश का उल्लेख भी आवश्यक है। इस सेवक ने तब इन दोनों वृद्ध और अनुभवी शास्त्रार्थ महारथियों से विनती की थी कि आप पुराने नेताओं के संग रहे हैं। इस विषय पर कुछ लेख दें। इन दोनों पूज्य विद्वानों ने लिखा था कि हम आपके लेख बड़े ध्यान से पढ़ते हैं। आप बहुत दक्षता व योग्यता से मोर्चा सम्भाले हुए हैं। हम सब बोलेंगे तो इससे हमारी हानि होगी। जहाँ आवश्यक होगा आपको सामग्री व प्रमाण देंगे, बस इतना ध्यान रहे कि विषयान्तर न होने दें।

श्री अमर स्वामी महाराज का २७-४-१९७३ का लिखा एक ऐतिहासिक पत्र हम प्रकाशित करवाने वाले हैं। इन तीनों महापुरुषों के दिशा निर्देश से टक्कर लेने से आर्यसमाज विजयी रहा। अमर स्वामी जी ने विजय के पश्चात् जोरदार पत्र लिखकर हमें बधाई दी थी।

एम. मोनियर विलियम्ज़ का प्रमाण:- महर्षि के सब जीवनी लेखकों ने महर्षि के विष देने वाले षड्यन्त्रकारियों में से जोधपुर की नन्हीं भगतन वेश्या पर बहुत कुछ लिखा है। आर्यसमाज के इतिहास को प्रदूषित करने के प्रयोजन से एक भद्रपुरुष ने नन्हीं भगतन को चरित्र प्रमाण पत्र देकर भक्तन व वैष्णव घोषित करते हुए जोरदार शब्दों में लिखा है कि वह तो 'उपपत्नी' थी, कोठे वाली नहीं थी, उसने मन्दिर बनवाया। यह भी लिखा कि पं. लेखराम जी, देवेन्द्र बाबू आदि किसी ने उसे वैश्या नहीं लिखा।

इस दुष्प्रचार का शिकार होकर एक भोले कृपालु ने दीवान हरबिलास जी शारदा के ग्रन्थ में नन्हीं के लिये प्रयुक्त Courtesan शब्द का अर्थ उपपत्नी कर दिया। श्री पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय आदि ने भी इस शब्द का प्रयोग किया है। भारतीय वेद, शास्त्र और ऋषियों की कहाँ सुनते हैं? उन्हें तो मैक्समूलर आदि का प्रमाण चाहिये। डिस्कवरी ऑफ इण्डिया का कोई उद्धरण माँगा जाता है।

ऐसे सज्जनों से हमारा निवेदन है कि आपके एक कुलगुरु एम. मोनियर विलियम्स के इंग्लिश संस्कृत डिक्शनरी विशालकाय ग्रन्थ के पृष्ठ १६२ पर इस शब्द का पहला अर्थ वैश्या ही दिया गया है। वारविलासिनी आदि और भी कई अर्थ दिये गये हैं। हमारा भोले-भाले देश बन्धुओं से नम्र निवेदन है कि न तो स्वयं भ्रमित हों और न ही अन्य धर्मबन्धुओं को भ्रमित होने दें। मित्रों! आप भले ही पं. भगवद्दत्त जी, सन्तराम जी, पं. चमूपति जी तथा पं. युधिष्ठिर मीमांसक का प्रमाण न मानें परन्तु अपने गोरी चमड़ी वाले कुलगुरु का प्रमाण तो स्वीकार कर लीजिये। वे लोग आपसे कहीं अधिक ही अंग्रेजी जानते थे। अपने अहं की तुष्टि के लिये इतनी हीन मनोवृत्ति का प्रदर्शन न करें। इससे कहीं भी टिक न पाओगे।

श्री आदित्यमुनि जी का पत्र:- भोपाल से श्री

आदित्यमुनि जी ने 'आर्य सेवक' नागपुर के जुलाई १९६३ के अंक में प्रकाशित अपने एक लेख 'राधास्वामी मत और स्वामी दयानन्द' लेख की एक-एक प्रति सम्पादक जी को तथा इस विनीत को भेजी है। आपने श्री धर्मवीर जी को लिखा है कि यह लेख आपके परोपकारी में छपे लेख से ५० वर्ष पूर्व ही करवा दिया था।

आर्य सेवक में प्रकाशित इस लेख के लिये श्रीमान् आदित्यमुनि जी को हम बधाई देते हैं। इस लेख में 'सारवचन' का उद्धरण एक उपयोगी प्रमाण है। इस पत्र से यह पता चलता है कि राधास्वामी मत के ऋषि दयानन्द विषयक मेरे सब लेखक आदित्यमुनि जी की दृष्टि में नहीं आये। एक लेख में सेवक ने लिखा था कि कई वर्ष पहले पंजाब सभा के पत्र में श्री हजूर जी महाराज की पुस्तक पर एक लेखमाला दी थी। इस घटना को चालीस वर्ष से अधिक समय हो गया। राधास्वामी मत के लोग जिस कल्पित घटना का प्रचार कर रहे हैं, हम उसे कोई महत्त्व नहीं देते थे। शंका करने वालों का यदा-कदा व्याख्यानों में समाधान करते रहे। जब राधास्वामियों के किसी बड़े व्यक्ति के किसी विशेष ग्रन्थ में इस कल्पित घटना की चर्चा न होने पर भी बहुत प्रचार होने लगा तो इस लेखक ने राधा स्वामियों के तीन गुरुओं की पुस्तकों के आधार पर इसकी विस्तृत विवेचना कर दी। महर्षि १८७८ ई. में जालन्धर पधारे थे। तब 'चमत्कार' विषय पर एक मौलवी से शास्त्रार्थ करते हुए ऋषि ने राधास्वामी मत के गुरुजी का नाम लेकर चमत्कारों का खण्डन किया। राधास्वामियों की नई गढ़न्त के प्रतिवाद में पहली बार ही हमने यह प्रमाण दिया। यह शास्त्रार्थ हस्ताक्षरयुक्त था, अत: यह कथन कि सत्यार्थप्रकाश में हमारे मत का खण्डन नहीं क्योंकि ऋषि आगरा में राधास्वामी मत के गुरुजी से ..... यह कथन इस प्रमाण से सर्वथा थोथा सिद्ध हुआ। आरम्भिक काल के तीन गुरुओं की पुस्तकों में इस कल्पना की गन्ध तक नहीं मिलती। बाबा सावनसिंह जी व्यास गद्दी के संस्थापक गुरु थे। आपका स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी से विशेष सम्बन्ध था। स्वामी जी के एक लेख में सन् १९५०-१९५१ में इस सेवक ने एक प्रसंग पढ़ा था। यहाँ उस प्रसंग को देकर बाबा जी की स्वामी जी महाराज से इतनी निकटता होते हुए राधास्वामियों की यह कहानी गुरु सावनसिंह जी ने स्वामी जी महाराज को कभी नहीं सुनाई।

बाबा जी का एक मुसलमान चेला वर्षों से डेरा व्यास में रहता था। गुरुजी की बहुत सेवा करता था। उसने बाबा जी से कहा कि मैं इतने लम्बे समय से आपकी सेवा में हूँ। मुझे अपने में मिला लो। मेरा नाम भी बदल दो। बाबा जी ने उसे स्वामी जी के पास भेजा और कहा, ''वह शुद्ध कर देंगे फिर तुम्हें मिला लिया जायेगा।'' उसने मठ में जाकर यह सन्देश दिया तो स्वामी जी ने कहा, ''बाबा जी तुम्हें मुक्ति दे सकते हैं, क्या वह शुद्ध नहीं कर सकते?''

ऋषि दयानन्द जी पर सैकड़ों पृष्ठ लिखने वाले बाबा शिवदयाल जी के उत्तराधिकारी गुरुओं ने अपनी पुस्तकों व लेखों में इस गढ़न्त का कभी भी, कहीं भी संकेत नहीं दिया। दुष्प्रचार के उन्मूलन के लिए ऋषि जीवन पर कार्य करते हुए विनीत ने परोपकारी में इस विषय पर कुछ चर्चा कर दी।

यदि ऐसा न लिखा करें तो अच्छा होगा:- हरियाणा के एक आर्य ने पूछा है कि आपने कुछ तड़प-कुछ झड़प में लिखा था कि सरदार पटेल ने तीन दिन में निज़ाम हैदराबाद की सेना व रज़ाकारों को रौंद डाला परन्तु इसके तुरन्त बाद आदरणीय श्री खुशहालचन्द जी आर्य ने यह लिख दिया है कि **सरदार ने केवल चार घण्टों में ही हैदराबाद को भारत में मिला दिया।** आपका कथन प्रामाणिक है या लाला जी का? सज्जनों! हैदराबाद राज्य के पुराने क्षेत्र के लोग प्रतिवर्ष १८ सितम्बर को मुक्ति दिवस मनाते हैं। सेना वहाँ १३ सितम्बर को भेजी गई। चार दिन को लाला जी ने भूलवश चार घण्टे बना दिया। दोष लाला खुशहालचन्द जी का नहीं। दोष तो पत्रों के सम्पादक महानुभावों का है जिनको अपने सिद्धान्तों व इतिहास की बहुत प्रसिद्ध घटनाओं की बहुत चिन्ताजनक जानकारी है। यदि परोपकारी में लिखते हुए हमसे कुछ भूल होगी तो हम नि:संकोच हाथ जोड़कर लिखित रूप में क्षमा याचना करेंगे।

ऋषि जीवन में मुद्रण दोष की अशुद्धियों के लिए भी हम तो क्षमा प्रार्थी हैं। भूल के लिए क्षमा माँगना आर्यत्व है, यह बड़प्पन है। कश्मीर विलय के बारे लाला खुशहालचन्द जी ने जो कुछ लिखा है उसकी जाँच प्रश्नकर्त्ता को श्री मेहरचन्द महाजन की आत्मकथा, श्री मेनन के रियासतों के विलय विषयक ग्रन्थ अथवा श्री बलराज मधोक की आत्मकथा से मिलान करने का परामर्श ही दिया जा सकता है।

आगे देखो-आगे निकलो:- सैद्धान्तिक भाषण बहुत कम सुनने को मिलते हैं। कभी-कभी कुछ वक्ता सिद्धान्त चर्चा करते हैं तो स्वामी दर्शनानन्द जी, पं. रामचन्द्र जी देहलवी की कोई युक्ति सुना देते हैं। सर सैयद अहमद खाँ और मौलाना सनाउल्ला जी का नामोल्लेख करके अपने तुलनात्मक अध्ययन का प्रभाव जमाते हैं। जिनकी सैद्धान्तिक विवेचन में रुचि है उन्हें पं. धर्मदेव जी की सम्पादकीय टिप्पणियों के आर-पार जाना चाहिये। मौलाना न्याज़ फ़तेहपुरी के 'निगार' की फाईलें खोजकर जानिये व बताइये कि आर्य सामाजिक विचारधारा की छाप मत पन्थों पर कितनी गहरी है। रुड़की से श्री यशवन्त जी ने इंग्लैण्ड से प्राप्त एक जानकारी दी तो इस सेवक ने विश्व प्रसिद्ध विचारक व लेखक श्री अनवर शेख की एक छोटी परन्तु महत्वपूर्ण कृति का हिन्दी अनुवाद करने की ठान ली। वैदिक दर्शन का प्रचार करने वाले हमारे बड़ों ने जो

क्रान्ति कर दिखाई उसका प्रमाण अनवर शेख जी और डॉ. गुलाम जेलानी का साहित्य है। उदीयमान युवकों को नई-नई योजनायें देने की बजाय कुछ ठोस जानकारी नहीं दी जा सकती। यशवन्त जी ने विदेश से जिस नये वार प्रहार की जानकारी दी है उसका उत्तर देने में सक्षम महाशय कृष्ण जी, उनका बेटा के. नरेन्द्र, पं. शान्तिप्रकाश जी, ठाकुर अमरसिंह सब चले गये।

वर्तमान में तो प्रो. जयदेव जी तथा राजेन्द्र जिज्ञासु ये दो व्यक्ति ही लोहा ले सकते हैं। बहुत कुछ लुट चुका है। भवन व संस्थायें तो बहुत हैं। टक्कर लेने के लिये प्रताप, तेज, आर्य मुसाफिर, प्रकाश व मुसाफिर की फाईलें चाहिये। वे कहाँ हैं? उनका लाभ उठाने वाले कहाँ हैं? परोपकारिणी सभा के संरक्षण में कुछ सुयोग्य युवक जी जान से जुटे तो हैं। हम चाहते हैं कि उनका काम बोले। हमारे प्रमाण-पत्र देने से कुछ नहीं बनेगा। नये प्रहार का प्रतिकार करने की चाह रखने वाले युवक श्री जयदेव जी आर्य का तथा इस सेवक का मार्गदर्शन लेना चाहें तो हमें बहुत हर्ष होगा। यहाँ-वहाँ महासम्मेलन करने से न तो कोई धर्मदेव निकलेगा और न ही धर्मभिक्षु तथा लोकनाथ सरीखे विद्वान् जन्मेंगे। नारायण स्वामी महाराज, स्वामी आत्मानन्द जी, स्वामी अभेदानन्द जी और स्वामी नित्यानन्द जी के रिक्त स्थान भरने की कुछ चिन्ता करो। कुछ युवक आगे निकलते हैं तो उनको बहकाने, भटकाने वाले लीडर भी तो कम नहीं।

नया धन्धा:- एक कहावत है- **'नया जाल लाया पुराना शिकारी।'** कुछ लोग जन साधारण को बहकाने भटकाने के लिये नये-नये ढोंग करते रहते हैं। यह कहावत उन्हीं पर चरितार्थ होती है। वे अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए गिरगिट के समान रंग बदलते रहते हैं। गिरगिट को तो रंग बदलने में देर लग सकती है परन्तु इस प्रकार के लोगों को देर नहीं लगती।

प्रकृति की रचना?:- 'तड़प-झड़प' लिखकर पोस्ट करने से कुछ ही समय पहले दो प्रश्नों का उत्तर माँग लिया गया। दोनों ही शंकायें सैद्धान्तिक, दार्शनिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं इसलिये डाक रोककर उनका समाधान भी साथ ही भेजना आवश्यक जाना। 'आर्य प्रतिनिधि सभा' रोहतक के १४ नवम्बर के मुखपृष्ठ पर श्रीयुत् लालचन्द जी चौहान पंचकूला का ईश्वर, जीव और प्रकृति पर एक लम्बा परन्तु एक भ्रामक लेख उत्तर के लिये पहुँचा है। पंचकूला समाज में तो बड़े-बड़े विद्वानों के सैद्धान्तिक व्याख्यान होते रहते हैं। न जाने मान्य लालचन्द जी ने हमारे मूलभूत सिद्धान्त क्यों किसी से कभी विचार नहीं किया और न ही इस विषय पर कोई प्रामाणिक ग्रन्थ पढ़ा है।

आपने इस लेख में एक से अधिक बार 'प्रकृति की रचना' शब्दों का प्रयोग करके पाठकों के सामने भ्रम और अज्ञान परोसा है। दूसरे पैरा में 'ईश्वर के द्वारा बनाई गई प्रकृति' शब्दों का पढ़कर हम चौंक पड़े। 'ईश्वर सर्वज्ञ होने से मूर्ति में भी व्यापक है'। यह कथन भी भ्रामक है। 'सर्वज्ञता से वे भी (आपके माता-पिता) **ईश्वर के स्वरूप ही हुए।'** लालचन्द जी यहाँ भी भटक गये हैं। जीव सर्वज्ञ नहीं, अल्पज्ञ है। ईश्वर का स्वरूप होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

आगे चलकर फिर "प्रकृति की रचना किसने की" यह प्रश्न उठाया है। "बुद्धिमान् व्यक्ति की बुद्धि में चारों ओर दुःख ही दुःख है।" ऐसे-ऐसे वैदिक धर्म विरुद्ध वाक्य पढ़कर हमें बहुत दुःख हुआ। दोष लेखक का कम पत्रिका के सम्पादक का कहीं अधिक है।

If a candle is barnt, nothing is lost. अर्थात् मोमबत्ती के जलने से कुछ भी नष्ट नहीं होता। विज्ञान का यह नियम वैदिक सिद्धान्त के अनुसार है। विज्ञान भी प्रकृति को अनादि व अनश्वर मानता है। प्रकृति की रचना किसी ने नहीं की। प्रकृति से जगत् की रचना प्रभु करता है। बाईबिल के आरम्भ में ही पहली आयत में आता है "and the spirit of God moved upon the face of the waters." अर्थात् ईश्वर का आत्मा पानियों के तल पर तैरता था। इससे भी यही प्रमाणित होता है परमात्मा के साथ प्रकृति भी अनादि है। जल जब जगत् की रचना से पहले था तो प्रकृति का अनादित्व (उत्पन्न न होना) सिद्ध हो गया। अभाव से भाव का विश्व इतिहास में कोई उदाहरण नहीं है। सब देशों में सब विश्वविद्यालयों में प्रकृति को अनुत्पन्न माना जाता है। यह आर्य दर्शन की दिग्विजय है।

संसार में चारों ओर दुःख ही दुःख नहीं सुख भी बहुत है। यह वैदिक मान्यता है।

दूसरी शंका है कि **ईश्वर ने पापी व पाप को क्यों उत्पन्न किया?** आर्य धर्म का घोष है कि **ईश्वर ने न तो पापी को पैदा किया और न ही पाप को।** जीव अनादि है। कर्म करने में स्वतन्त्र है। चाहे तो पुण्य करे चाहे पाप करे। द्रष्टा प्रभु कर्मानुसार भोग (फल) देता है। यह वैदिक मान्यता है।

वेद सदन, अबोहर-१५२११६ (पंजाब)

पतों में नवीनीकरण व संशोधन की प्रक्रिया

सभी विद्वानों व परोपकारी के सुधी पाठकों से निवेदन है कि अपना नाम, पत्र व्यवहार का पूरा पता (पिन कोड सहित), दूरभाष संख्या और ई-मेल किसी भी माध्यम से भिजवाने का कष्ट करें जिससे कि परोपकारिणी सभा के वर्तमान के पतों में नवीनीकरण व संशोधन की प्रक्रिया में सहयोग मिल सके।

वैचारिक क्रान्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र प्रचार-प्रसार की भव्य योजना

विचार किसी भी देश, समाज व जाति की अमूल्य निधि (सम्पत्ति) है। जिसके पास में ठोस श्रेष्ठ विचार नहीं या फिर विचार को फैलाने के साधन नहीं हैं या फिर जो व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपने विचारों की अवहेलना करते रहते हैं, उनका अस्तित्त्व भी एक दिन समाप्त प्राय: हो जाता है। आज हर सम्प्रदाय, समाज, समूह व देश अपने विचारों का प्रचार-प्रसार बड़ी प्रबलता से हर क्षेत्र में व हर साधन से कर रहे हैं, लेकिन काफी समय से आर्यसमाज में वैचारिक शिथिलता देखी जा रही है। इस शिथिलता को दूर करने का मात्र एक ही उपाय है कि हम सभी आर्य जन ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत **अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का प्रचार नये शिक्षित लोगों में करें।** इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर सभा के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला २०१४ दिल्ली में प्रचार-प्रसार की योजना तैयार की गयी है।

सत्यार्थप्रकाश ही क्यों?-१. यदि कोई व्यक्ति, समाज, समूह, संस्था या राष्ट्र एक ग्रन्थ (पुस्तक) पढ़कर विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो यह सत्यार्थप्रकाश से ही सम्भव है। **२.** आज के दूषित वातावरण में वैदिक वाङ्मय को ठीक-ठीक जानने हेतु, पढ़ने-पढ़ाने हेतु प्रथम सत्यार्थप्रकाश और महर्षि के अन्य ग्रन्थों का पढ़ना-जानना अत्यन्त आवश्यक है। **३.** दर्शनशास्त्र, इतिहास, भारतीय परम्परा, कर्त्तव्य, धर्म-अधर्म, उचित-अनुचित, न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य तथा मानवता आदि क्या हैं? यह सारी जानकारी सत्यार्थप्रकाश से प्राप्त होती है व होगी। **४.** पाखण्ड, मक्कारी, कुरीतियों व बुराइयों का नाश भी सत्यार्थप्रकाश से सम्भव है। **५.** सत्यार्थप्रकाश व ऋषि के अन्य ग्रन्थों की उपस्थिति में कोई विधर्मी अपनी शेखी नहीं मार सकता तथा किसी भी हिन्दू को बहकाकर विधर्मी नहीं बना सकता। **६.** सत्यार्थप्रकाश के प्रभाव ने न जाने कितनों का जीवन ही बदल डाला। सत्यार्थप्रकाश के जोड़ की दूसरी पुस्तक दुर्लभ है, जिसमें ज्ञान का अमूल्य खजाना भरा पड़ा है। इसलिए इसका प्रचार-प्रसार अनिवार्य है, जरूरी है। **योजना का विवरण निम्न प्रकार का होगा-१.** सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में आकार लगभग ६०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में होगी। लागत मूल्य ५०/- रुपये प्रति पुस्तक। **२.** ऋषि जीवन चरित्र हिन्दी में लगभग २०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में। लागत मूल्य ३०/- रुपये प्रति पुस्तक। **३.** सत्यार्थप्रकाश हिन्दी से इतर (अन्य) भाषियों के लिए सी.डी.या डी.वी.डी. के माध्यम से उपलब्ध करवाया जायेगा। इस डी.वी.डी. में लगभग १८ भाषाओं में सत्यार्थप्रकाश होगा। लागत मूल्य लगभग २५/- होगा। **४.** संक्षिप्त ऋषि जीवन चरित्र अंग्रेजी में। लागत मूल्य १०/- रुपये।

नोट-यह साहित्य वैचारिक क्रान्ति के लिए व वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार के लिए गैर आर्यसमाजी सज्जनों व संस्थानों आदि को नि:शुल्क या अल्प मूल्य में वितरित किया जायेगा। साहित्य का ठीक-ठीक उपयोग हो व योग्य शिक्षित विचारवान् व्यक्तियों तथा संस्थानों तक पहुँचे इसके लिए अच्छी वितरण व्यवस्था की जाएगी। योग्य प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का चयन कर कार्य में नियुक्त किया जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति, संस्था आदि से एक फार्म भरवाया जायेगा, जिसमें उनका पूर्ण पता सम्पर्क आदि हो। जिससे भविष्य में परिणाम का मूल्यांकन किया जा सके। ग्रन्थों की प्रामाणिकता, शुद्धता व साज-सज्जा सुन्दरता का विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस प्रचार-प्रसार योजना का उद्देश्य सत्यार्थप्रकाश व महर्षि के जीवन-चरित्र के प्रचार-प्रसार के माध्यम से मानव मात्र का कल्याण करना है। यह प्रचार-प्रसार मुख्य रूप से शिक्षित गैर आर्यसमाजी लोगों के लिए होगा। यह कार्य पूर्णरूप से महर्षि के मन्तव्यों के अनुरूप हो इसका विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस कार्य की सफलता के लिए सभी आर्यजनों से, समाजों से व संस्थानों से निवेदन है कि इस महान् कार्य में तन-मन-धन से अपना सहयोग करने व अपने इष्ट मित्रों को भी सहयोग करने की प्रेरणा करें।

नोट-अपना आर्थिक सहयोग आप परोपकारिणी सभा अजमेर के नाम प्रेषित करते समय **सत्यार्थप्रकाश प्रचार-प्रसार शीर्षक** अवश्य लिखें। धन प्रेषित करने हेतु आप चैक, ड्राफ्ट व सीधे राशि सभा के बैंक खाते में जमा करवाकर जमा पर्ची की प्रतिलिपि प्रेषित कर देवें या फिर ईमेल, दूरभाष द्वारा सूचित कर सकते हैं। धन्यवाद।

खाता धारक का नाम-**परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

नोट : इस योजना हेतु दिया गया दान आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत कर मुक्त होगा।

सम्पर्क : मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

सप्तसिन्धु देश की मुद्राएँ

- विरजानन्द दैवकरणि

भारत के पश्चिमी दिशा में सिन्धु नदी के पूर्व-पश्चिम की ओर सात-सात नदियों से युक्त तीन सप्त-सिन्धु प्रदेश थे। सिन्धु नदी के पश्चिम में आर्यावर्त्त देश के अन्तर्गत एक सिन्धु प्रदेश था, वहाँ आजकल मुसलमानों का आधिपत्य है। इस सप्तनद विभाग में तृष्टामा, सुसर्त्तु, रसा, श्वेती, कुभा, क्रमु और गोमती ये सात नदियाँ बहती थीं और ये सभी नदियाँ सिन्धु नदी में गिरती थीं। इन नदियों के वर्त्तमान नाम और स्थिति इस प्रकार है-

सुसर्त्तु नदी का नाम सुवास्तु या स्वात, श्वेती=डेरा इस्माइल खाँ प्रदेश की अर्जुनी, कुभा=काबुल, क्रमु=कुरम और गोमती=गोमाल है। यह सप्तनद प्रदेश पश्चिमोत्तर भारत के पुराने आर्यावर्तांश का पश्चिमी सप्तनद प्रदेश था। यह बलोचिस्तान, अफगानिस्तान और बन्नू आदि प्रदेशों को लेकर संगठित था।

सिन्धु नदी के पश्चिमोत्तर बहुत दूर तक एक और भी सप्तनदी प्रवाहित प्रदेश था। उन सात नदियों में ऊर्णावती कैलास निम्नस्थ ऊर्णा प्रदेश में, हिरण्मयी, वाजिनीवती और सीलमावती इससे भी उत्तर में तथा एणी नदी निम्न बलूचिस्तान में बहती है, चित्रा नदी चित्रल से निकलकर कुभा में मिलती है। ऋजीती नामक नदी भी इसी के पास बहती थी।

तीसरा सप्तनद प्रदेश सिन्धु नदी से पश्चिम में पंचनद प्रदेश कहलाता था। इसमें सिन्धु नदी तथा पंजाब की पाँच नदियाँ झेलम, चन्द्रभागा (चिनाव), इरावती (रावी), वितस्ता=व्यास और शतद्रु (सतलज) थी। सातवीं नदी सरस्वती भी इन पाँचों नदियों के पूर्वी क्षेत्र में बहती थी। इन सात नदियों के क्षेत्र को जो सिन्धु और यमुना के मध्यवर्ती था, सप्तनदप्रदेश कहते थे।

इसी सप्तनद प्रदेश के एक प्राचीन नगर अग्रोदक जनपद के अगाच (अगरोहा) नगर से चार ताम्र मुद्राएँ प्राप्त हुई हैं। उन पर मुख भाग में एक सुगठित बलिष्ठ (मल्ल) पहलवान सदृश बैठे हुए व्यक्ति का चित्र है, उसने दायाँ हाथ मोड़कर दाहिने कंधे के पास स्थित किया हुआ है तथा बायाँ हाथ बायें घुटने पर टिका हुआ है। पृष्ठ भाग में कुषाण कालीन लिपि में **सत सिन्धु** लिखा है।

प्राचीनकाल में जनपद और प्रदेशों के नाम से भी मुद्राएँ प्रचलित की जाती थीं। जैसे-

यौधेयगण की मुद्रा पर - बहुधान्यक, भूमधान्यक प्रदेश।
मालवगण की मुद्रा पर - मालवजनपदस।
आग्रेयगण की मुद्रा पर - अगोदके अगाचजनपदस।
आर्जुनायन की मुद्रा पर - 'भी' से आरम्भ होने वाला कोई जनपद।
कौशाम्बी राज्य की मुद्रा पर - कसबिया।
उज्जयिनी की मुद्रा पर - उजयिनी

वर्तमान अगरोहा हरयाणा प्रान्त के हिसार जनपद में हिसार- फतेहाबाद मार्ग पर हिसार से २३ किलोमीटर तथा दिल्ली से १९३ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस स्थान से आग्रेयगण के अतिरिक्त यौधेय, कुषाण, मथुरा के मित्रवंशीय शासक, मिनेण्डर आदि इण्डोग्रीक शासक, राजन्य आदि अनेक अज्ञात गणराज्यों तथा सामन्तदेव आदि आर्य शासक और मुस्लिम शासकों की मुद्राएँ मिलती रहती हैं।

इस प्रकार सप्तसिन्धु प्रदेश की नई मुद्राओं का अन्वेषण पहली बार किया गया है। **- गुरुकुल झज्जर, हरियाणा**

ई-मेल द्वारा परोपकारी निःशुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही निःशुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अत: पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह निःशुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल-psabhaa@gmail.com

-व्यवस्थापक

आधार कार्ड की विसंगतियाँ

- डॉ. माधुरी गुप्ता

मैं ग्रीष्मावकाश में एस.बी.आई., मुख्य शाखा अजमेर में अपनी पासबुक लेकर चैकबुक लेने गई। बैंक अधिकारी ने एक फार्म देकर कहा इसे भरकर ले आना, साथ ही आधार कार्ड की छायाप्रति भी संलग्न कर देना ताकि पता सत्यापित हो सके। मैंने कहा- ठीक है। मैं चित्तौड़गढ़ के राजकीय महाविद्यालय में संस्कृत की प्राध्यापिका हूँ। मेरे पास आधार कार्ड है, मैं उसकी फोटोप्रति लगा दूँगी। अधिकारी ने पूछा- उसमें पता कहाँ का है? मैंने कहा कि चित्तौड़गढ़ का। अधिकारी बोला- मैड्म, यह आपने जीवन की सबसे बड़ी गलती की है। आप यदि अजमेर की हैं तो आपने आधार कार्ड में अजमेर का पता क्यों नहीं दिया? मैंने कहा कि चित्तौड़गढ़ में मैंने सुना था कि आधार कार्ड बनवाना बहुत आवश्यक है, शहरभर में शिविर लगे हुए हैं, कहीं भी बनवा लो, ये तो पूरे भारत में मान्य है। उस समय मैं वहीं थी अत: मैंने वहीं बनवा लिया। अधिकारी ने कहा- नहीं मैडम, इसमें तो चित्तौड़गढ़ का पता है, यह अजमेर में नहीं चलेगा। उसकी बातें सुनकर मेरे मन में बैचेनी भर गई और विचारों की उथल-पुथल होने लगी। मैं सोचने लगी- सारे भारत में चलने वाला आधार कार्ड क्या इतना स्थानीय है? जबकि इसका प्रचार-प्रसार इतना अधिक किया जा रहा है मानो इसके बिना जीवन व्यर्थ हो जाएगा।

भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण जीवन की शान आधारकार्ड ने मेरी प्रथम आवश्यकता पर ही मुझे चित्तौड़गढ़ का निवासी बना दिया। आधार कार्ड की इस स्थानीयता ने मुझे जिन बिन्दुओं पर सोचने को विवश किया वे इस प्रकार हैं:-

१. मैं चित्तौड़गढ़ की स्थायी निवासी हो गई हूँ। अब मैं चित्तौड़गढ़ के अतिरिक्त अन्य किसी स्थान पर किसी कार्य के लिए इसकी फोटोप्रति प्रस्तुत नहीं कर सकती, क्योंकि चित्तौड़गढ़ के अतिरिक्त अन्यत्र मान्य नहीं होगा।

२. मेरी तेरह वर्षीया पुत्री भी मेरे साथ चित्तौड़गढ़ में रहती है अत: उसका पता भी वही है जो मेरा है। उसका विवाह चित्तौड़गढ़ के अतिरिक्त कहीं अन्यत्र होगा तो उसके आधार कार्ड के पते का क्या होगा? बड़ी होकर वह यदि उच्च शिक्षा के लिए कभी अपने पिता के पास अजमेर चली गई तो क्या होगा?

३. मेरे पुत्र का आधार कार्ड उसकी १६ वर्ष की आयु में अजमेर में बना है। क्या वह बड़ा होकर अजमेर से बाहर जाकर नौकरी कर सकेगा?

४. प्रो. श्रुति शर्मा का विवाह नौकरी लगने के बाद हुआ। नौकरी में उन्होंने अपना पुराना सरनेम ही रखा, उसे बदला नहीं क्योंकि उनके सारे प्रमाण पत्र और अंकतालिकाएँ उसी सरनेम की हैं। इस प्रकार पति और पत्नी का अलग-अलग सरनेम लिखा जाता है। अब आधार कार्ड में पत्नी ने पति का सरनेम गुप्ता लगा दिया। आप बताएँ- नौकरी में, प्रमाण पत्रों में शर्मा, आधार कार्ड में गुप्ता। ये दो अलग-अलग सरनेम क्या उस मैडम की जिन्दगी को कठिन नहीं बनाएँगे?

स्थायी पते वाली समस्या से तभी छुटकारा पाया जा सकता है जब आधार कार्ड बनाने वाले कर्मचारी आधार कार्ड बनवाने वाले लोगों में स्पष्ट रूप से यह घोषणा करते रहें कि फार्म भरते समय आप इसमें अपना स्थायी पता भरें, नौकरी वाला या अस्थायी नहीं। पर देखा जाए तो इस नश्वर जीवन में स्थायी है क्या? यदि स्थायित्व पर विचार करें तो पाएँगे कि यहाँ स्थायी जैसा कुछ भी नहीं है फिर आधार कार्ड में दिया गया स्थायी पता कहाँ तक आपका साथ निभाएगा? देखिए-

५. यदि आप आरम्भ में संयुक्त-परिवार में रहते आए हैं और वही पता आपने अपने आधार कार्ड में लिखा है तो भविष्य में नौकरी लगने पर आप अपना स्वतन्त्र घर नहीं बना सकेंगे।

६. यदि आपका घर छोटा है जिसका पता आप आधार कार्ड में दे चुके हैं। भविष्य में आप उसे बेचकर नया बड़ा मकान नहीं बना सकेंगे क्योंकि आधार कार्ड आपको ऐसा करने की अनुमति नहीं देगा।

७. स्थायित्व की समस्या उन लोगों के समक्ष भी उपस्थित होगी जब कोई किसी अन्य राज्य से आकर किसी अन्य राज्य में नौकरी या व्यवसाय करते हैं तथा वृद्धावस्था में पुन: अपने घर जाना चाहेंगे। जैसे- ओडिशा का कोई व्यक्ति राजस्थान में सरकारी नौकरी पूर्ण करके सेवानिवृत्ति के पश्चात् ओडिशा जाना चाहेगा तो राजस्थान में बना उसका आधार कार्ड क्या उसे ओडिशा में वे सब सुख-सुविधाएँ दिलवाने में समर्थ हो सकेगा जो उसे राजस्थान में मिलती हैं या उसे राजस्थान के अजमेर, जयपुर या चित्तौड़गढ़ का ही स्थायी निवासी मान लिया जाएगा।

८. इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि भविष्य में भारत का कोई भी नागरिक अपने शहर, मुहल्ले और मकान

को छोड़कर कहीं और जाकर नहीं रह सकेगा।

९. यदि पति-पत्नी दोनों सरकारी नौकरी करते हुए सरकारी आवास में १० वर्ष से रहते आ रहे हैं और वहीं अपना आधार कार्ड बनवाते हैं क्योंकि उनके लिए सरकारी आवास ही उनका घर है। अब स्थानान्तरण या अपना घर बनवाने की स्थिति में उस आवास और शहर छोड़कर जाने पर आधार कार्ड में अंकित पता क्या उनके लिए समस्याएँ खड़ी नहीं करेगा?

उपर्युक्त कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं जिन पर इस लेख में विचार किया गया है किन्तु इनके अतिरिक्त भी कुछ नए बिन्दु हो सकते हैं जो मेरी दृष्टि में नहीं आए हैं पर दूसरों के लिए समस्या खड़ी कर रहे होंगे। इन समस्त बिन्दुओं पर विचार करके आधार कार्ड की स्थानीयता को भारतीयता में बदलने पर विचार करना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। आधारकार्ड पर दिए गए पते को ही सही और स्थायी मानने पर यह कहना गलत नहीं होगा कि भारत का निवासी कहलाना तो दूर की बात आधारकार्ड ने मुझे राजस्थान के चित्तौड़गढ़ के प्रतापनगर की स्थायी निवासिनी बना दिया है। मैं समझ गई हूँ कि आधार कार्ड ने मेरा जीवन निराधार बना दिया है क्योंकि यह चित्तौड़गढ़ के अतिरिक्त कहीं अन्य काम नहीं आ सकेगा।

यदि ऊपर लिखित बातें सत्य हैं तो जीवन की शान आधार कार्ड के विषय में यही कहा जाना उचित होगा कि-

चलते जीवन की झूठी शान।
आधार ने दी गलत पहचान
जय हिन्द! जय भारत!

महाराणा प्रताप राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़-३१२००१ (राज.)
चलदूरभाष-०९४६०१७७६६६

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

परोपकारी के सम्बन्ध में घोषणा

प्रकाशन - परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर

संपादक	-	धर्मवीर	**मुद्रक का नाम**	-	श्री मोहनलाल तँवर,
नागरिकता	-	भारतीय	**पता**	-	वैदिक यन्त्रालय,
पता	-	केसरगंज, अजमेर			केसरगंज, अजमेर
प्रकाशक	-	धर्मवीर	**प्रकाशन अवधि**	-	पाक्षिक
नागरिकता	-	भारतीय			
पता	-	कार्यकारी प्रधान, परोपकारिणी सभा, अजमेर			

मैं, धर्मवीर एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार सही है।

फरवरी २०१४ **प्रकाशक : धर्मवीर**

संस्कारों-संस्कृति की भाषा : हिन्दी

- प्रभुलाल चौधरी

देश के सबसे बड़े भू-भाग में बोली जाने वाली राष्ट्रभाषा 'हिन्दी' के कारण ही भारत विश्व में अपनी महानता बनाये हुए है। इसमें भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की वह सुगन्ध समायी हुई है, जिसके आकर्षण में सम्पूर्ण विश्व सुख-शान्ति का अनुभव करता है। हिन्दी विश्व की किसी भी समुन्नत भाषा की तरह समुन्नत और समृद्ध भाषा है। आदियुग के सरह, स्वयंभू और पुष्पदन्त से लेकर सूर, तुलसी, मीरा और कबीर से होती हुई प्रसाद, पन्त, निराला तक यह निरन्तर गौरवपूर्ण ढंग से विकसित होती गई है। स्वाधीनता संग्राम में भी साहित्य व पत्रकारिता के माध्यम से देश को संगठित रखकर आजादी दिलाने में इसने भरपूर योगदान दिया। हिन्दी इस देश के बहुसंख्यक वर्ग के द्वारा ही नहीं, संस्कृत जैसी वैज्ञानिक एवं अतिसमृद्ध भाषा की उत्तराधिकारिणी होने के साथ-साथ सरल, सुप्रयोज्य एवं सुग्राह्य होने के कारण विभिन्न भाषा भाषी-सेनानियों तथा भाषा मर्मज्ञों के द्वारा एकमत से राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार की गई है।

हमारे वेद, ब्राह्मण-ग्रन्थ, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, गीता आदि ऐसे समृद्ध ग्रन्थ हैं जो सत्य और ईश्वर का, आत्मा से परमात्मा का साक्षात्कार कराते हैं, मानवता का आभास कराकर मानव को मानव बनाने में सहायक सिद्ध होते हैं, जिससे यदि किसी राहगीर को काँटा भी चुभ जाये तो संवेदना अश्रु बनकर छलक पड़ती है। राम का आदर्श, कृष्ण की वात्सल्यता, नानक का उपदेश एवं तुलसी, सूर, कबीर, रसखान आदि के छन्दों में मानव सद्भावना का सन्देश समाया हुआ है, जो स्वर्गानुभूति भी कराते हैं एवं ब्रह्मानन्द सहोदर की भी प्राप्ति होती है तथा मन 'मानव-धर्म' की ओर अग्रसर होता है। हिन्दी एक व्यापक भाषा है, जो सम्पूर्ण भारत का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें सम्पूर्ण भारत का एक सोच बोलता है। इसके एक-एक शब्द के उच्चारण में हमारी आत्मा, हमारी संस्कृति समायी हुई है। भारतीय संस्कृति को जीवित रखने के महान् उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए मनीषियों ने हिन्दी को प्रतिनिधि भाषा घोषित करने में भारत का और अपना गौरव समझा है। यह निर्विवाद सत्य भी है कि जिस दिन 'हिन्दी' व्यावहारिक रूप में प्रतिनिधि भाषा का रूप धारण कर लेगी और 'अंग्रेजी' का मोह भंग हो जायेगा, उस दिन हमारा 'एकता' का कार्य अनायास ही सिद्ध हो जायेगा। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दी के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कहा है कि : 'हिन्दी के द्वारा ही सारे देश को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।' इसी प्रकार डॉ. जाकिर हुसैन ने हिन्दी को 'देश की एकता की कड़ी' कहा है। हिन्दी सहज, सरल एवं सम्पूर्ण भाषा है, पर्याप्त शब्द कोष है। इसमें हमारी संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने का सामर्थ्य तथा लयबद्धता है, भरपूर साहित्य है, जिसके संवाद अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। हिन्दी ने अपनी मौलिकता एवं सुबोधता के बल पर ही राष्ट्र की सभ्यता, संस्कृति और साहित्य को जीवन्त बनाये रखा है तथा सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बन्धा महसूस कराते रहती है।

भारत एक बहुभाषा-भाषी देश है। संविधान के अनुसार यहाँ १८ भाषाएँ, १० लिपियाँ और १६५ बोलियाँ प्रचलित हैं। फिर भी हिन्दी यहाँ की प्रमुख भाषा है। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों में- ये भाषाएँ शतदल कमल की पंखुरियाँ जैसी हैं और हिन्दी इसकी मध्यम मणि है। यही नहीं डॉ. रामविलास शर्मा के शब्दों में 'सामाजिक, सांस्कृतिक, जातीयता की दृष्टि से हिन्दी बोलने वालों की संख्या दुनिया में सबसे ज्यादा है।' डॉ. अज्ञेय के शब्दों में अपने स्वभाव व अपनी प्रादेशिक स्थिति के कारण हिन्दी में निरन्तर एक सांस्कृतिक केन्द्रोन्मुखता रही है। अत: प्राचीन काल में जैसे संस्कृत, पाली, प्राकृत सम्पर्क भाषा रही है, आज वही भूमिका हिन्दी की है। यद्यपि भारत के नवधनाढ्य, महानगरीय अभिजात्य और बुद्धिजीवी वर्ग तथा राजनेता अंग्रेजी से चिपके हुए हैं, किन्तु ९० प्रतिशत जनता अर्थात् मध्यमवर्गीय व सामान्यजन हिन्दी पर ही निर्भर हैं। विदेशों में भी हिन्दी के प्रति ललक बढ़ रही है- मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, इण्डोनेशिया, जावा, सुमात्रा आदि तो बृहत्तर भारत के ही अंग हैं जहाँ हिन्दी का व्यापक प्रचलन है, किन्तु सुखद उपलब्धि तो यह है कि जर्मनी के २५ विश्वविद्यालयों, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के कोलम्बिया, न्यूयार्क, शिकागो आदि १२ विश्वविद्यालयों में हिन्दी अध्ययन की व्यवस्था है। इस तरह पॉलैण्ड के वारसा, फ्राँस के तीन, लंका के तीन तथा स्वीडन, नार्वे, स्टाकहोम आदि को मिलाकर विश्व के १३७ विश्वविद्यालयों में हिन्दी का पठन-पाठन होता है। कनाड़ा से दो पत्र हिन्दी में निकलते हैं और चीन से एक। विश्वभर में समाचार बुलेटिन, सिनेमा व कैसेट के माध्यम से भी हिन्दी का प्रसार हो रहा है। भारत के बाहर

हिन्दी पुस्तकों की माँग बढ़ रही है। हिन्दी पुस्तकों का मुद्रण प्रकाशन भी विश्वस्तर का हो रहा है। अभी हाल में लन्दन में नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा आयोजित पुस्तक प्रदर्शनी ने हिन्दी पुस्तकों की लोकप्रियता को सत्यापित भी कर दिया है।

हिन्दी बोलने वाले भारत में ही नहीं वरन् सीमा पर अन्य देशों में भी बहुसंख्यक रूप में हैं, जैसे मॉरीशस एवं नेपाल ऐसे देश हैं, जहाँ हिन्दी भाषी हर गली, चौराहे एवं घर, नगर में मिल जायेंगे। हमारी विश्व प्रसिद्ध 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ओत-प्रोत संस्कृति, सभ्यता एवं भाषा के प्रति विदेशों में ऐसा प्रेम उद्वेलित है कि वहाँ के विश्वविद्यालयों में हजारों छात्र-छात्राएँ हिन्दी माध्यम से विद्याध्ययन कर रहे हैं तथा भारतीय साहित्य का गूढ़ अध्ययन, मनन, चिन्तन कर रहे हैं। इसी से भारत को 'मनुष्य जाति का पालना' कहा जाता है, क्योंकि मानव संस्कृति का जन्म भारत में ही हुआ है तथा मनुष्य ज्ञान की प्रथम ज्योति यहीं से प्रज्वलित हुई है। स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गाँधी, विवेकानन्द, रामकृष्ण परमहंस, आचार्य विनोबा भावे आदि महान् विभूतियों ने भारतीय दर्शन, शास्त्र एवं आध्यात्म की रोशनी विश्व को दिखायी है, जिससे भारत एवं भारतीयों की आत्मा, हिन्दी के प्रति आकर्षित हुई है एवं प्रेम बढ़ा है। अहिन्दीभाषी लोग भी हिन्दी सीख रहे हैं। पूर्व राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा ने अपने उद्‌बोधन में एक बार कहा था कि- 'राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के महत्त्व की अनदेखी नहीं की जानी चाहिए। यदि इसमें कुछ अड़चने हैं, तो उन्हें दूर करने के प्रयास किये जाने चाहिए।'

भारतीय संस्कृति व धर्म की कड़ियाँ भी हिन्दी से गहरी जुड़ी हुई हैं, इसीलिए सन्तों एवं भक्तों के पद व वाणी हिन्दी के माध्यम से घर-घर में बसे हैं। राष्ट्रीयता, भारतीयता और एकता हिन्दी का मूल स्वर है। हिन्दी की अपनी क्षमता व शक्ति है। इस परिदृश्य में होने वाले उसके विकास, प्रसार व समृद्धि को कोई नहीं रोक पायेगा। बस, जरूरत है हिन्दी के सृजनशील हिन्दी जीवी, हिन्दी भाषी लोगों की इच्छाशक्ति व कर्मठता की कि वे समर्पण के साथ हिन्दी का ही प्रयोग करें और बाह्य प्रभावों से सम्भावित विकृतियों का संयमन व अनुशासन करें, जिससे हिन्दी के मूलस्वरूप की सुरक्षा हो सके।

अत: आइए हम सभी अपनी मातृभाषा, राष्ट्रभाषा हिन्दी को पूर्णत: अपनाकर राष्ट्र गौरव बढ़ायें। व्यर्थ के अहम आडम्बर को दूर भगाएँ, अंग्रेजी का चश्मा उतार फेंके। सच्चे सपूत की भाँति ईमानदारी से भारत भूमि का कर्ज चुकायें, जिससे आने वाली पीढ़ी स्मरण रख सके एवं गर्व से कह सके कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है, जिसमें विश्वबन्धुत्व की भावना कूट-कूट कर भरी है और इसका गौरवशाली इतिहास रहा है। हमारी एक ही भाषा 'हिन्दी' और एक ही धर्म 'मानव धर्म' है।

- महिदपुर रोड, उज्जैन (म.प्र.)

आनन्द पाया

- महात्मा चैतन्यमुनि

जब से यह ओ३म् का दीप जलाया,
अपने ही भीतर आनन्द पाया।

पाँच यमों से घर को संवारा, नियमों से देह चित्त बुहारा।
आसन जमाकर संकल्पित हुआ, प्राणायाम से किया उजियारा।।

प्रत्याहार को प्रत्यक्ष है पाया।
जब से यह ओ३म् का दीप जलाया।........

धारणा का फिर अभ्यास किया, विवेक वैराग्य का आभास किया।
चित्त को धारणा में ठहराया, अर्थ सहित ओ३म् का जाप किया।।

अपने भीतर मुड़-मुड़ आया।
जब से यह ओ३म् का दीप जलाया।........

संकल्प विकल्प ये अब शान्त हुए, साक्षी भाव से सब श्रान्त हुए।
दृष्टि बदली दृश्य सब बदल गए, आलोकित घर, आंगन, प्रान्त हुए।।

चिर अतृप्त मन यह हर्षाया।
जब से यह ओ३म् का दीप जलाया।........

मन में हुआ अब ध्यान का डेरा, पूर्ण हुआ जन्म-मरण का फेरा।
देह-गेह पुलकित आलोकित, समाधि सजी हुआ दर्शन तेरा।।

'चैतन्य' ने अपना प्रियतम पाया।
जब से यह ओ३म् का दीप जलाया।........

- महादेव, सुन्दर नगर-१७४४०१ (हि.प्र.)

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (द्वितीय स्तर)

दिनांक १५ से २२ जून २०१४

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे। साथ ही पढ़ाये गये विषयों की लिखित परीक्षा व आपके द्वारा पालन किये गये शिविर के अनुशासन का भी आंकलन किया जायेगा, इसी आधार पर प्रमाण–पत्र भी दिये जायेंगे। इस दिशा में अब तक दो शिविरों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर सफल प्रयास किया गया है। **इस द्वितीय स्तर के शिविर में वे ही भाग ले सकेंगे, जिन्होंने प्राथमिक स्तर वाले शिविर में भाग लिया है।** इस शिविर में प्राथमिक स्तर वाले शिविर की अपेक्षा अधिक सूक्ष्मता से विषयों का अनुभव करवाया जाएगा और वैसा ही सूक्ष्मता से, कठोरता से नियम व अनुशासन होगा।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. दिनचर्या के कुछ भाग में आकृति मौन भी अनिवार्य होगा।
३. प्रार्थी की न्यूनतम दसवीं के स्तर की योग्यता अनिवार्य है। इस हेतु प्रमाण–पत्र की प्रतिलिपि लाना आवश्यक है।
४. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
५. शारीरिक व मानसिक सात्विकता के लिए यथासम्भव भोजन की मात्रा निश्चित होगी।
६. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
७. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
८. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
९. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
१०. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
११. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
१२. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१३. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
१४. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मंत्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व

शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. ११ से १५ मार्च,२०१४ में होने वाली **सन्ध्या गोष्ठी** स्थगित की गई है। पुनः निर्धारण होने पर सूचित किया जायेगा।

२. १३ से २० अप्रैल, २०१४ **ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर,** सम्पर्क : ०९४१४००३७५६, समय : मध्याह्न १.३० से २.३० बजे।

३. १६ से २३ मई, २०१४ **आर्यवीर शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४४३६०३१

४. २४ से ३१ मई, २०१४ **संस्कृत सम्भाषण शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४७०९४९४

५. १ से ८ जून, २०१४ **आर्य वीराङ्गना शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४४३६०३१

६. १५ से २२ जून, २०१४- **योग-साधना शिविर (द्वितीय स्तर),** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

विशेष- परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित पूर्व दो ध्यान-प्रशिक्षक-प्रशिक्षण शिविरों में प्रथम व उच्च प्रथम श्रेणी प्राप्त प्रशिक्षकों के लिए भी योग साधना शिविर (द्वितीय स्तर) में भाग लेने का अवसर रहेगा।

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा-ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान-प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम-स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान-प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। ये ध्यान-प्रशिक्षक आपके जनपद के निकट भी उपलब्ध हो सकते हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक-व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर

१३ से २० अप्रैल, २०१४, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर। अधिकतम संख्या-५०। मात्र पूर्व पञ्जीकृत प्रतिभागियों के लिए। इसमें विद्वद् गोष्ठी द्वारा निर्धारित आर्यसमाज की ध्यान पद्धति का प्रशिक्षण दिया जायेगा व ध्यान करवाने का अभ्यास भी करवाया जायेगा। लिखित एवं प्रायोगिक परीक्षा के बाद योग्य व्यक्तियों को परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षक-प्रमाण पत्र भी दिये जायेंगे। शिविर शुल्क १००० रु. है। १३ अप्रैल सायं ४ बजे तक पहुँचना अनिवार्य है। विलम्ब से आने वालों की शिविर में सहभागिता नहीं हो पायेगी। शिविर का समापन २० अप्रैल को सायं ५ बजे तक हो जायेगा। इच्छुक व्यक्ति, कृपया सम्पर्क करें-९४१४००३७५६, समय-मध्याह्न १.३० से २.३०।

विशेष- प्रतिभागी अपना आवेदन १५ मार्च २०१४ तक भेज देवें जिसमें कि नाम, पत्र व्यवहार का पूरा पता, अपना चित्र, दूरभाष संख्या स्पष्ट लिखा हो। स्वीकृति मिलने पर ३० मार्च तक अपना शुल्क अवश्य ही जमा करवाकर अपना पंजीयन करवा लेवें।

५० की सीमित संख्या में प्रथम पंजीयन करवाने वाले को ही शिविर में भाग लेने की अनुमति होगी।

पता-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज. ३०५००१।ईमेल-psabhaa@gmail.com

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

।।ओ३म्।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) के दो शिविर लगाये जा चुके हैं। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

वेदों में श्लेष अलंकार से वर्णित ज्योतिर्विज्ञान

- डॉ. सुद्युम्न आचार्य

एकलविद्यानिधान वेद में अनेकानेक विद्याओं के सूत्र प्राप्त होते हैं। ये सूत्र काव्यमयी भाषा में कहे गए हैं। स्वयं वेद में वेद को काव्य बताया गया है। साथ ही उसकी अन्य काव्यों से विपरीत यह विशेषता कही गई है कि वह वेद काव्य न तो कभी तिरोभाव को प्राप्त होता है, न ही कभी वृद्ध होता है। उसके उपदेश सदा, सभी युगों में प्रासंगिक होने से यह वेद वाणी, उषा के लिये कहे गए 'पुराणयुवति' विशेषण को धारण करती है। इस अर्थ में वेद का यह मन्त्र सर्वथा प्रासंगिक है-

देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति।

- अथर्व. १०.८.३२

वेद वाणी के काव्यमयी होने से इसमें काव्य की सभी विशेषताएँ सम्प्राप्त हैं। इसमें छन्द, गीत, अलंकार सभी उपलब्ध होते हैं। अलंकारों का उपयोग करते हुए विज्ञान के कठिन विषयों का निरूपण वेद की विशेषता है। वास्तव में वेद मन्त्र एक ओर काव्य के अनेकानेक अलंकारों के तो दूसरी ओर विज्ञान के अनेक विषयों के मूल हैं। इस प्रकार छन्द-अलंकार तथा विज्ञान-दोनों का वेदों से उद्भव हुआ है।

प्रस्तुत लेख श्लेष अलंकार का उपयोग करते हुए ज्योतिर्विज्ञान को निरूपित करने वाले अथर्ववेद के इस प्रथम मन्त्र की व्याख्या के लिये है-

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे।।

- अथर्व. १.१.१

यहाँ 'त्रिषप्ताः' इस शब्द में गणित की अनेक संक्रियाओं से प्राप्त परिणामों का श्लेष से वर्णन किया गया है। इसके लिये पहले हम संख्यावाचक शब्दों से प्रकट गणितीय परिणामों का उल्लेख करते हैं-

(क) समासयुक्त दो संख्यावाचक शब्दों से गुणन का संकेत होता है। जैसे 'द्विदशाः' शब्द का अर्थ २×१०=२० होता है। पाणिनीय व्याकरण के नियमानुसार 'द्विर्दश' इस विग्रह अनुसार इसका बहुव्रीहि समास होता है।[१]

वेद में समास के बिना भी इस संक्रिया की सूचना प्रदान की गई है-

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।

- यजु. ३१.१५

यहाँ 'त्रिःसप्त' में समास रहित 'सुच्' प्रत्यय द्वारा गुणन के परिणाम का उल्लेख है।

(ख) इन्हीं संख्यावाचक शब्दों से द्वन्द्व समास की दशा में योग संक्रिया का संकेत प्राप्त होता है। जैसे द्वादश, त्रयोदश आदि संख्या शब्दों का मूल अर्थ २+१०=१२ तथा ३+१०=१३ यह है। यहाँ द्वौ च दश च इस विग्रह अनुसार इस संक्रिया की सूचना प्राप्त होती है।

(ग) वेद के अन्य प्रसंगों में गुणन तथा योग इन दोनों संक्रियाओं के एक साथ विहित करने का उल्लेख प्राप्त होता है। जैसे-

आ पुत्रा अग्ने मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विंशतिश्च तस्युः।

- ऋग्वेद १.१६४.११

यहाँ 'सप्त शतानि विंशतिः' का अर्थ ७×१००+२०=७२० यह है। यहाँ अनेक संक्रियाओं की प्राप्ति की स्थिति में पहले गुणन तथा पश्चात् योग इस नियम का संकेत है। आधुनिक गणित के समीकरणों में भी वेद से प्रेरणा प्राप्त करते हुए पहले गुणन तथा पश्चात् योग का नियम सर्वमान्य है।

प्रस्तुत लेख में प्रमुखतः व्याख्येय मन्त्र के 'त्रिषप्ताः' शब्द में श्लेष अलंकार का उपयोग करते हुए एक साथ पूर्वोक्त तीनों संक्रियाओं का संकेत प्रदान किया गया है। वह इस प्रकार है-

(क) त्रिरावृत्ताः सप्त अर्थ में बहुव्रीहि समास अनुसार- ३×७ = २१
(ख) आदिसप्तान्तविषमसंख्यायोगः अर्थ अनुसार- ३+५+७ = <u>१५</u>
३६
(ग) 'एतद्गुणितं त्रयश्च सप्त च' अर्थ अनुसार- ३६(३+७)= ३६०

इस प्रकार हमें वह ३६० संख्या प्राप्त होती है, जिसका काल-चक्र तथा सूर्य-चक्र के विभाजन के रूप में भी उल्लेख मान्य है। सूर्य-चक्र के लिये यह संख्या ७ के माध्यम से प्राप्त की गई है। वेद का एक अन्य मन्त्र इस प्रकार है-

सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रम् एको अश्वो वहति सप्तनामा।

- ऋग्वेद १.१६४.२

यहाँ रूपक अलंकार से कहा है कि इस विशाल सूर्य-बिम्ब के परिभ्रमण के लिये एक रथ है, उस पर एक चक्र है, उसे खींचने वाला अश्व भी एक है। पर वह अश्व ७ लगामों से जुड़ा हुआ है। इस ७ के माध्यम से पूर्वोक्त प्रकार से ३६० संख्या तथा उसकी द्विगुणित ७२० संख्या प्राप्त की गई है, जिसका उल्लेख पूर्वोक्त मन्त्र में है।

सूर्य-चक्र के अनुसार काल-चक्र का निरूपण प्रस्तुत मन्त्र में है-

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत।

तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शंकवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः।।
ऋग्वेद १.१६४.४८

यहाँ पुनः अलंकार से कहा है कि सूर्य-चक्र के समान काल-चक्र को कोई महान् पुरुष समझ पाता है। यह चक्र भी ३००+६०=३६० अरे के समान विकसित है। इन सभी मन्त्रों से प्रेरणा प्राप्त करके काल-चक्र के ३६० मानवक-खण्डों के रूप में स्वीकृति प्राप्त हुई। इसके आधार पर काल के बड़े से बड़े तथा छोटे से छोटे ऐसे विभाजन स्वीकृत किये गए जिनके भागफल या गुणज संख्या के रूप में अन्ततः ३६० संख्या प्राप्त होती है। इस प्रकार सभी युग, महायुग ३६० के गुणज हैं। एक चतुर्युगी का मान ४.३२.०००० अन्ततः १२×१००×१०×३६० के रूप में होने से अनुमान्य था। विशिष्ट यज्ञ-याग के लिये विशिष्ट दिन-समूह के रूप में निर्धारित षडह, द्वादशाह, पक्ष या दर्श-पौर्णमास आदि सभी ३६० के भागफल होते हैं। दिन से छोटे मात्रक घटी, पल आदि सभी में गणितीय संक्रियाओं से अन्ततः ३६० संख्या उपलब्ध होती है। आधुनिक घड़ी के लिये बेबीलोन-वासियों द्वारा अनुमान्य दिन के लिये १२ तथा अहोरात्र के लिये २४ घण्टों की व्यवस्था ३६० से सुसंगत थी। आधुनिक घड़ी में ६०×२४=१४४० मिनट का एक अहोरात्र प्राप्त करते हैं। प्राचीन भारतीय ज्योतिर्विज्ञान में २४ मिनट की एक घटी तथा ६० घटी का एक अहोरात्र होने से इसी १४४० मिनट का अहोरात्र प्राप्त करते हैं। यह १४४० संख्या अन्ततः ३६० का गुणज है। इस प्रकार ६०×३६०=२१६०० घटी का एक वर्ष प्राप्त करते हैं। साथ ही ६० विनाडी की एक घटी तथा ६ प्राण की एक विनाडी होने से ६×६०×६०=२१६०० प्राण का एक अहोरात्र प्राप्त करते हैं। यह भी अन्ततः ३६० की गुणज है।

इस संक्षिप्त विवेचन से प्रकट है कि काल-विभाजन में ३६० का सर्वाधिक महत्त्व है। अत एव वेद में अनेक उपायों से यह संख्या प्राप्त की गई है। इस व्याख्या के आलोक में प्रस्तुत मन्त्र तथा उसका अर्थ इस प्रकार है-

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे।।

जो सूर्य-चक्र तथा काल-चक्र के ३६० खण्ड अपने अनेकानेक रूपों को धारण करते हुए परिभ्रमणशील हैं, वेदवाणी के पालक ईश्वर आज उनके बलों को हमारे शरीर में धारण कराएें।

टिप्पणी

१. संख्यया व्ययासन्नदूराधिकसंख्याः संख्येये- अष्टाध्यायी सूत्र २.२

निदेशक, वेद वाणी वितान, प्राच्य विद्या शोध संस्थान, बिरला रोड, कोलगवाँ, सतना-४८५००१ (म.प्र.)

प्रेरक गाथा ऋषिवर की

- ईश्वर दयाल माथुर

जात-पात के बन्धन सब झकझोर दिए।
पाखण्ड और भ्रमों के गढ़ भी फोड़ दिए।।
सुप्त राष्ट्र की तरुणाई को जगा दिया।
सिंह नाद कर स्वर वेदों का गुँजा दिया।।
श्रुति के इन नादों का सब श्रवण करें।
कर्मरथी की प्रेरक गाथा का स्तवन करें।।
सत की कर टँकार असत् को हाँका था।
ऋषि की सुन हुँकार फिरंगी काँपा था।।
एक हृदय हो विश्व समूचा, चिन्तन उसका।
त्रिविध ताप से मुक्त रहे मानव जगती का।।
सत्यव्रती के पावन निश्चय का अनुगमन करें।
कर्मरथी की प्रेरक गाथा का श्रवण करें।।

२५/४७, कावेरी पथ, मानसरोवर, जयपुर-३०२०२० (राज.)

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग एक वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

संवेदनशीलता – जीवन का एक पहलू

– सुकामा आर्या

हम लोग एक स्तर पर जीवन जी रहे हैं, जहाँ संवेदनशीलता का बहुत बड़ा योगदान है। हमारे जीवन की शैली में संवेदनशीलता एक अहम रोल अदा करती है। कौन कितना संवेदनशील है यह व्यवहार का, चरित्र का एक मापदण्ड भी माना जाता है। संवेदनशीलता को हम अलग-अलग नजरिए से देखते हैं।

सर्वप्रथम स्वयं को लें- हम स्वयं के प्रति कितने संवेदनशील हैं? हम कहाँ तक अपनी भावनाओं, विचारों को पकड़ पा रहे हैं? हम स्वयं की अनुभूतियों को कहाँ तक समझ पाते हैं? ये हमारी संवेदनशीलता के स्तर का निर्धारण करता है।

फिर हम दूसरों, अपने आसपास के लोगों के प्रति कितने संवेदनशील हैं? यहाँ पर हम अक्सर गलती कर जाते हैं। हमें लगता है हम पढ़-लिख गए हैं, अफसर हो गए हैं, विद्वान् हो गए हैं, हम अपने औहदे पर हैं- चूँकि कोई हम पर आक्षेप नहीं उठा सकता है। हम कुछ-कुछ उपेक्षा भाव से संवेदनशील होते जाते हैं। दूसरों की भावनाओं को समझने का प्रयास ही नहीं करते हैं। अगर हम समझ भी जाते हैं तो हम अपने अहं के सामने उनको स्वीकार नहीं करते। इस तरह धीरे-धीरे हम वातावरण के प्रति, परिवार जनों के प्रति, साथी कर्मचारियों के प्रति, शिष्यों के प्रति असंवेदनशील होते जाते हैं। हमें ऐसा लगने लगता है कि जो हमारे बनाए मापदण्ड, मयार पर पूरा नहीं उतरता वह व्यक्ति किसी भी स्तर का नहीं है या यूँ कहें कि हम उसके स्तर पर आकर सोचना ही नहीं चाहते। बस अपना फतवा जारी कर देते हैं या मन में एक निश्चित धारणा बना लेते हैं। उस व्यक्ति से ऐसा कार्य किस कारण से हुआ? उसकी सोच उस समय क्या थी? किन भावनाओं, संवेदनाओं के दबाव में उसने कुछ विशेष कार्य किया- हम जानने का प्रयास ही नहीं करते हैं। बस व्यक्ति विशेष पर प्रतिक्रिया कर देते हैं। सभा में कुछ खास शब्द बोलकर इंगित कर देते हैं। यह असंवेदनशीलता का परिणाम है। यह सभ्य समाज में स्वीकार्य नहीं होता है।

तीसरा संवेदनशीलता का पहलू है- हम क्या महसूस करते हैं कि ईश्वर कितना संवेदनशील है? How sensitive and responsive God is to our prayers? सच्चे हृदय से की गई पुकार को वह बहुत करीब से सुनता है। उनको कर्माशय के अनुसार पूरा भी करता है। वह हमारी प्रार्थना को ज्यों का त्यों समझता है। यह हमारे लिए बहुत ही सौभाग्य की बात है। यह एक वरदान है। अगर हम किसी की भावनाओं को आहित करते हैं, उसके दिल को दुखाते हैं तो उस दु:खी व्यक्ति की पुकार पर ईश्वर द्रवित हो उठता है। उसके हृदय से निकली हुई पुकार इतनी पुरजोर होती है कि वह पूरी कायनात को हिला सकती है-

मत सता ज़ालिम किसी को, मत किसी की आह ले,
कि दिल के दु:ख जाने से नादां, अर्श भी हिल जाएगा।

सो हम इस बात पर ज्यादा ध्यान दें कि हम भाव शून्य न हो जाएँ, सड़क पर चलते समय, रेल में यात्रा करते समय, आसपास के व्यक्तियों, परिस्थितियों के प्रति संवेदनशील रहें। कुछ आवश्यकता होने पर सहयोग दें, अपनापन दिखाएँ, आत्मवत् व्यवहार करें क्योंकि-

दु:खिया पास पड़ा है तेरे, तूने मौज उड़ाई तो क्या?
भूखा, प्यासा पड़ा पड़ोसी, तूने रोटी खाई तो क्या?

कोई दूसरा व्यक्ति आपके व्यवहार से ही आपकी योग्यता को पहचानता है, जानता है, महसूस करता है, कोई भी आपके प्रमाण-पत्र नहीं देखता। हममें से कईयों को तो याद भी नहीं होगा कि उनके विभिन्न प्रकार के, विभिन्न क्षेत्रों के प्रमाण-पत्र कहाँ रखे हैं? जीवन में कागजी प्रमाण-पत्रों की अपेक्षा व्यक्तियों के द्वारा बोले गए प्रशंसनीय शब्द, ज्यादा कीमती हैं। यह मौखिक प्रमाण-पत्र जीवन पर्यन्त हमें उत्साह देते हैं, प्रेरणा देते हैं। उन्हें प्राप्त करने व संजो कर रखने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि ये Ever Lasting होते हैं अर्थात् मृत्यु के बाद भी इन्हीं की बदौलत हमारा नाम दुनिया में कायम रहता है। इन प्रशंसनीय शब्दों की, उत्साहवर्धक शब्दों की हमारे साथ एकरसता होने से, अलग भौतिक सत्ता न होने से हमारे जिहन में रहते हैं। इसीलिए कहते हैं कि You are as you present yourself.

कई बार हम अपने अत्यन्त निकटतम परिजनों के प्रति ज्यादा असंवेदनशील होते हैं क्योंकि वहाँ हम औपचारिकता का मुखौटा उतार कर व्यवहार करते हैं। बाहर समाज में तो हम सभ्य दिखने के प्रयास में कुछ संवेदनशील रहते हैं। परन्तु घर, परिवार, सदस्यों के प्रति, पड़ोसियों के प्रति, साथियों के प्रति हम थोड़े उपेक्षा भाव से व्यवहार करने लगते हैं क्योंकि We take them gauranteed. हमें निश्चय होता है कि यह व्यक्ति तो मेरा

ही है। मुझे समझता है, जानता है, पहचानता है। यह मेरी पत्नी है, माँ है, भाई है, पिता है ये मेरा ख्याल रखेंगे ही। इसी बात से हम आश्वस्त रहते हैं, यह अतिविश्वास भी उनकी भावनाओं की कद्र न करने में सहयोगी कारण होता है। हम यहाँ से भूल जाते हैं कि

जो आज आसमान में उड़ रही है,
कल वो कट के गिर भी सकती है।

आज अगर ईश्वर कृपा से सब व्यवस्थित है, सम्यक् है तो कल को परिस्थितियाँ विकट भी हो सकती हैं। खासतौर से हमें अपने जीवन के आधार-भावनाओं, संवेदनाओं व अनुभूतियों को पकड़ कर रखना चाहिए।

यह संवेदनशीलता का चरमोत्कर्ष होता है जब हम किसी मन्दबुद्धि को भी मन्दबुद्धि नहीं कहते। नेत्रहीन को अन्धा नहीं कहते सूरदास या प्रज्ञा चक्षु कहते हैं, उनकी भावनाओं को व्यथित नहीं होने देते। उनके हृदय को आघात नहीं पहुँचाते। उसी प्रकार सामान्य व्यवहार करते समय भी हमें दूसरे के जीवन के नकारात्मक पक्ष को सामने लाकर उनके हृदय को अहित नहीं करना चाहिए। अपनी सोच को विस्तृत करें। विस्तार में प्रेमभाव, एकरूपता, समानता, समता प्रकट होती है। संकीर्णता की चार दीवारी से ऊपर उठकर व्यवहार करें, संवेदनशीलता को बढ़ाएँ।

संवेदनशीलता बढ़ाने की प्रक्रिया तो यही है कि- पहले हम अपने प्रति क्षण-क्षण में संवेदनशील हों। मैं क्या सोच रहा हूँ? किसका विचार उठ रहा है? क्यों मैं ऐसा महसूस कर रहा हूँ? सुख-दु:ख, ग्लानि, क्षोभ, घृणा, द्वेष ये सब कब-कब मेरे मन में हावी हो जाते हैं? चलते, फिरते, उठते, बैठते सूक्ष्मता से इन विचारों को, भावनाओं को महसूस करने की आदत डालें।

इसी प्रकार फिर धीरे-धीरे दूसरों पर यही प्रक्रिया करें। जानेंगे कि वह क्या चाहता है? उसकी मुझसे कब-कब क्या-क्या अपेक्षा होती है? कहाँ तक मैं दूसरों को शान्त व सन्तुष्ट करने में सहयोग कर सकता हूँ? इस प्रकार हमारे सम्बन्ध सुधरेंगे, भावनात्मक स्तर पर हम अपने प्रियजनों के निकट होंगे। हम दूसरों को समझेंगे तो हमें भी समझने वाले दुनियाँ में मिल जाएंगे। बस थोड़ी सी अपनी सोच, अपना नज़रिया बदल कर देखें- 'सभी अपने ही हैं' यह महसूस होगा और यूँ भी-

कुछ देर है अंधेर नहीं, सौदा है अदल परस्ती है,
इस हाथ करो, उस हाथ मिले, यहाँ सौदा दस्त बदस्ती है।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

आवासिकं संस्कृत-भाषा-शिक्षण-प्रशिक्षण-शिविरम्

लोक-भाषा-प्रचार-समिति-राजस्थानशाखाया: परोपकारिणीसभायाश्च मिलितोद्यमेन अजमेरनगरे आवासिकं संस्कृतभाषाशिक्षण-प्रशिक्षण-शिविरम् आयोज्यते।

अवधि: - २४-०५-२०१४ त: ३१-०५-२०१३ (अष्ट दिनात्मकम्)
(२३-०५-२०१३ दिनांकस्य सायंकालपर्यन्तं शिविरस्थलम् ऋषि-उद्यानं प्राप्तव्यमेव भविष्यति।)

स्थानम् - ऋषि-उद्यानम्, पुष्करमार्ग:, अजमेर-३०५००१, दूरभाष:- ०१४५-२६२१२७०

योग्यता - संस्कृते रुचिमन्त: संस्कृत-आचार्या:, अध्यापका:, संस्कृतछात्रा:, उच्च माध्यमिक-वरिष्ठोपाध्याय-बी.ए./एम.ए./शास्त्रिकक्षा/आचार्यकक्षाछात्राश्च।

शुल्कम् - ३०० रुप्यकाणि।

व्यवस्था - एतद् शिविरम् आवासिकमस्ति, प्रशिक्षणार्थिनां भोजनावास व्यवस्था शिविरस्थाने भविष्यति
- बालिकानां, नारीणां कृते च पृथक् निवास व्यवस्था वर्त्तते, शिविरार्थिन: नित्योपयोगिनि वस्तूनि, शय्यावस्त्राणि लेखनसामग्री: च आनयेयु:।

स्वरूपम्- शिविरे अहोरात्रम् अखण्डं संस्कृतमयवातावरणम्,
- संस्कृतेन धाराप्रवाहं सम्भाषणस्य अभ्यास:,

विशेष - **संस्कृत-सम्भाषण सीखने का इच्छुक कोई भी व्यक्ति या विद्यार्थी सुबह ९ से ११ बजे तक शिविर में भाग ले सकता है।**

डॉ. धर्मवीर:
अध्यक्ष:

डॉ. निरञ्जन साहु:
सचिव:
०९४१४७०९४९४, ९८२९१७६४६०

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ जनवरी २०१४ तक)

१. श्रीमती लाली चौधरी, अजमेर, २. श्रीमती ललिता गुप्ता, जयपुर, राजस्थान, ३. श्री रुद्रकुमार गुप्ता, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, ४. स्वास्तिकाम: चेरिटेबल ट्रस्ट, अमरावती, महाराष्ट्र, ५. श्री विनोद कुमार, कलावली, हरियाणा, ६. श्री वेदप्रकाश नारंग, नई दिल्ली, ७. श्रीमती कमला पाण्डव, पटियाला, पंजाब, ८. श्री रजनीश कपूर, नई दिल्ली, ९. श्रीमती गायत्री देवी सारावगी, सिकन्द्राबाद, आ.प्र., १०. सिल्वर ओक सोल्यूशन प्रा.लि., मुम्बई, महाराष्ट्र, ११. श्रीमती अंजलि बंसल, नई दिल्ली, १२. श्री जगदीश प्रसाद, नीमच, म.प्र., १३. डॉ. आर्य नरेश हनुमन्त देव सिंह, नानगाँव, १४. श्री दिनेश शर्मा, अजमेर, १५. श्री सुभाषचन्द तापड़िया, अजमेर, १६. डॉ. अमृतलाल, उदयपुर १७. श्री मुमुक्षु मुनि, अजमेर, १८. श्री राजीव मल्होत्रा, फरीदाबाद।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगत अतिथियों को नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३१ जनवरी २०१४ तक)

१. श्रीमती लक्ष्मीदेवी सोहनलाल कटारिया, अजमेर, २. श्रीमती राजकुमार कृष्णसिंह कटारिया, अजमेर, ३. श्रीमती शकुन्तला सुल्तानसिंह, जयपुर, राजस्थान, ४. श्रीमती शकुन्तला पंचारिया, पीसांगन, राजस्थान, ५. श्री पी.के. शर्मा, अजमेर, ६. श्री ओमप्रकाश गुप्ता, अजमेर, ७. श्री कन्हैयालाल मोरवाल, अजमेर ८. श्री हरिश मोरवाल, अजमेर, ९. श्री जे.पी. गुप्ता, अजमेर, १०. श्री मुरलीधर भटड़, अजमेर, ११. श्री गोवर्धन प्रसाद खण्डेलवाल, अजमेर, १२. श्री सुरेश खण्डेलवाल, अजमेर, १३. श्री महेश खण्डेलवाल, अजमेर, १४. श्री कैलाशचन्द गुप्ता, अजमेर, १५. श्री मथुराप्रसाद नवाल, अजमेर, १६. श्री शिवलहरी पवन अग्रवाल, अजमेर, १७. श्रीमती कुमुदनी आर्या, अजमेर, १८. श्री राजकुमार आर्य, बिकानेर, १९. श्री नन्दकिशोर आर्य, अजमेर, २०. श्री सत्यनारायण प्रेम कंवर काबरा, अजमेर, २१. श्री के.एन. शर्मा, अजमेर, २२. श्रीमती कौशल्या बांगड, केकड़ी, राजस्थान, २३. श्रीमती सुशीला देवी झंवर, भीलवाड़ा, राजस्थान, २४. श्री रामनिवास बेनीगोपाल, काठमाण्डु, नेपाल, २५. श्री अशोक कुमार मंगल, अजमेर, २६. श्री बसन्त विजयवर्गीय, अजमेर, २७. श्री अभिषेक शुक्ला, अजमेर, २८. श्री हरिश चावला, अजमेर, २९. श्रीमती पारस देवी, अजमेर, ३०. श्रीमती माधुरी, निरंजन साहू, अजमेर, ३१. श्री भँवरसिंह सांखला, अजमेर, ३२. श्रीमती कमला देवी बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर, ३३. श्री मधुसुदन तोषनिवाल, अजमेर, ३४. श्री दुल्लीचन्द सेठी, अजमेर, ३५. श्रीमती सुन्दर देवी, अजमेर, ३६. श्री अमित जैन, ब्यावर, राजस्थान, ३७. श्री वेदप्रकाश नारंग, नई दिल्ली, ३८. श्री उदय, अजमेर, ३९. श्रीमती पुष्पा देवी, पाली, राजस्थान, ४०. श्रीमती नर्मदा देवी, पाली, राजस्थान, ४१. श्रीमती रतन देवी, अजमेर, ४२. श्री अनिल शर्मा, अजमेर, ४३. श्रीमती नेहा शर्मा, अजमेर, ४४. श्री दिनेश चन्द शर्मा, अजमेर, ४५. श्रीमती मन्जु शेखावत, अजमेर, ४६. श्रीमती शीला शर्मा, अजमेर, ४७. श्रीमती कल्पना शर्मा, अजमेर, ४८. श्रीमती प्रेरणा शर्मा, अजमेर, ४९. श्री राधेश्याम शर्मा, अजमेर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

सुक्रतु बनने के लिए

- **महात्मा चैतन्युनि**

क्रतु का अर्थ है कर्म करने वाला अर्थात् व्यक्ति को सदा कर्मशील बने रहना चाहिए। वेद हमें यही प्रेरणा देता है-

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

(यजु. ४०.२)

हे मनुष्य! (इह) इस लोक में (कर्माणि कुर्वन् एव) कर्मों को करते हुए ही तूने जीना है, (शतं समाः जिजीविषेत्) तू सौ वर्ष जीने की कामना कर, (एवं त्वयि इतः अन्यथा न अस्ति) कर्म करते हुए सौ वर्ष जीना ही तेरे जीवन का एकमात्र नियम है और कोई अन्य नियम नहीं मगर (न कर्म लिप्यते नरे) इन कर्मों में उलझ नहीं जाना बल्कि विरत होकर सदा कर्मशील बने रहना।

जीव कर्म करने में तो स्वतन्त्र है मगर फल भोगने में वह परतन्त्र है क्योंकि कर्मों का फल तो न्यायकारी परमात्मा को देना है इसलिए इस कर्म स्वतन्त्रता का लाभ उठाकर सदा कर्मशील बनें रहना चाहिए और ये कर्म निष्काम भाव से करने चाहिए। यजुर्वेद में ही अन्यत्र जीव को क्रतु कहा है- **ओ३म् क्रतो स्मर** (यजु. ४०.१५)। श्री कृष्ण जी भी कहते हैं- **अहं क्रतुरहं यज्ञः** (गीता ९-१६)। गीता में अन्यत्र यह भी कहा गया है कि बिना कर्म के तो व्यक्ति एक क्षण के लिए भी नहीं रह सकता है। अतः कर्म तो करने ही है मगर यदि व्यक्ति के द्वारा पुण्यकर्म किए जाएँ तो इससे वह निष्काम-कर्मी और सुक्रतु बन जाता है। वेद में सुक्रतु बनने की प्रेरणा दी गई है और साथ ही प्रक्रिया बताई गई है-

त्रिणी त्रितस्य धारया पृष्ठेष्वैरयद्रयिम्।
मिमीते अस्य योजना वि सुक्रतुः।।

(सा. १०.१५)

मन्त्र में सुक्रतु बनने के लिए मुख्यतः पहली बात कही गई कि- **त्रिणि त्रितस्य धारया**, जो व्यक्ति जीवन में तीन बातों को धारण कर लेता है, वह सुक्रतु बन जाता है। ऐसी बहुत-सी तीन बातें हैं मगर यहाँ हम वेद के एक मन्त्र की चर्चा करते हैं-

यदीमृतस्य पयसा पियानो नयन्नृतस्य पथिभी रजिष्ठैः।
अर्यमा मित्रो वरुणः परिज्मा त्वचं पृञ्चन्त्युपरस्य योनौ।।

(ऋ. १.७९.३)

अर्थात् जो मनुष्य (यदीमृतस्य पयसा पियानो) वेदवाणी रूपी गौ के दुग्ध का पान करता है, (रजिष्ठैः) ऋजुतम, छल-छिद्र से शून्य अर्थात् सरलता का जीवन जीता है, (अर्यमा) कामादि शत्रुओं का नियन्त्रण करता है, (वरुणः) द्वेष का निवारण करता है, (मित्रः) सबके साथ स्नेह करता है, (परिज्मा) सब क्षेत्रों में अपने कर्त्तव्य का पालन करता है, वही (उपरस्य योनौ) धर्ममेध के उत्पत्ति स्थान में (त्वचं पृञ्चन्ति) स्पर्श को प्राप्त करता है।

मन्त्र में मुख्यरूप से अर्यमा, मित्र और वरुण इन तीन गुणों की चर्चा की गई है जिनके कार्यान्वयन से हम सुक्रतु बन सकते हैं मगर ऐसा बनने के लिए भी हमें- **ऋतस्य**- अर्थात् वेद स्वाध्याय करके सत्य-ज्ञान के साथ जुड़ना होगा तथा **रजिष्ठैः पथिभि** अर्थात् छल-छिद्र रूपी व्यवहार को त्यागकर ऋजु-मार्ग का पथिक बनना होगा। वास्तव में ऐसा व्यक्ति ही **अर्यमा**-कामादि शत्रुओं का नियन्त्रण करता है अर्थात् उसका जीवन संयमपूर्ण हो जाता है तथा वह धर्ममेध जैसी उच्च स्थिति को प्राप्त करने में भी सफल हो जाता है। 'अर्यमा' वह व्यक्ति है जिसमें दान देने की भावना प्रबल होती है (**आर्यमेति तमाहुर्यो ददाति।** तै. १.१.२.४)। अर्यमा के अन्य अर्थ भी है- संयमशील अर्यमा है, विद्वानों का सम्मान करने वाला अर्यमा है और **(अरीन् यच्छति)** शत्रुओं का नियमन व दमन करने वाला भी अर्यमा है। काम शरीर का, क्रोध मन का और लोभ बुद्धि का विनाश करता है मगर अर्यमा इन सब पर विजय प्राप्त कर लेता है। इसी गुण के कारण परमात्मा का एक नाम अर्यमा भी है। सुक्रतु बनने के लिए हमें **मित्रः** अर्थात् सबके साथ स्नेह करने की भावना को भी प्रबल बनाना होगा। परमात्मा का एक नाम मित्र इसीलिए है कि वे सभी से समान रूप से स्नेह करते हैं। हमें भी परमात्मा का यह गुण धारण करना चाहिए क्योंकि मित्रता से ही व्यक्ति सब प्रकार की उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकता है इसके विपरीत अमैत्री-भाव से व्यक्ति का चतुर्दिक पतन हो जाता है क्योंकि ईर्ष्या-द्वेष में न तो समृद्धि ही है और न शान्ति। मैत्री-भाव से ही परिवार, समाज एवं विश्व में सामंजस्य और समरसता की भावना स्थापित हो सकती है अन्यथा अन्य कोई और दूसरा उपाय ही नहीं है।

सुक्रतु का तीसरा गुण है- **वरुणः**। वरुण वह है जो द्वेष का निवारण करता है। अन्यत्र कहा गया है- '**वरुणो नाम वरः श्रेष्ठः।**' द्वेष भावना का त्याग करके हम श्रेष्ठ बन सकते हैं, ईर्ष्या-द्वेष व्यक्ति की मनन-शक्ति को मार देती

है। व्यक्ति को स्मरण रखना चाहिए कि किसी को गिराकर हम ऊपर नहीं उठ सकते हैं बल्कि स्वयं पुरुषार्थ करके वैसा बनने का संकल्प लेना चाहिए। वेद कहता है (अथर्व. ६.१८.२) कि दूसरे के अभ्युदय को सहन न कर पाना ईर्ष्या है, वेद में ईर्ष्या को '**हृदय-अग्नि**' (६.१८.१) कहा गया है। इस रोग से ग्रसित व्यक्ति कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य तथा धर्म-अधर्म को भूल जाता है, उसमें न्याय-वृत्ति का अभाव हो जाता है और वह किसी प्रकार की लोक-लाज की भी परवाह नहीं करता है। वेद में कहा गया है कि ऐसा व्यक्ति- '**मृतमनस्तर**' मृत-मना हो जाता है अर्थात् मिट्टी में जैसे मनन-शक्ति नहीं होती, वह भी ऐसा ही बन जाता है। यही नही वह 'मम्रुष' अर्थात् मरे हुए के समान हो जाता है क्योंकि ईर्ष्या उसकी मनन-शक्ति को मार देती है.... उसकी आत्मा मानो मर जाती है। इसलिए प्रभु कहते हैं कि इस द्वेष भाव से व्यक्ति को मुक्त हो जाना चाहिए क्योंकि इस द्वेष भाव के छूटने से पाप वृत्ति भी छूट जाती है (अथर्व. ४-३३-७)। मनसा-परिक्रमा के मन्त्रों में इसी द्वेष भाव से छूटने की प्रार्थना की गई है.... परमात्मा का भी एक नाम वरुण है। इसलिए वेद में उससे तीन पाशों से मुक्त करने की प्रार्थना की गई है-

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय।
अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम।।

(ऋ. १-२४-१५, यजु. १२-१२, अथर्व. ७-८३-३, सा.पू. ६-३-१०)

इस मन्त्र में **अनागसः** पापों से मुक्त होने तथा **अदितये** पूर्ण स्वास्थ्य एवं मोक्ष हेतु प्रार्थना की गई है। ये बन्धन कौन-कौन से हैं, इस पर चिन्तन करना चाहिए। प्रथम बन्धन है- उत्तम बन्धन अर्थात् ऊपर का बन्धन। कारण शरीर का बन्धन, द्यौ अर्थात् हमारी बुद्धि का बन्धन तथा सत्वगुण का बन्धन है। दूसरा मध्यम बन्धन है- राजसिकता का जिससे हमारे मन और प्राण बन्धे हुए हैं, यह रज और सूक्ष्म शरीर का बन्धन है जो हमें कर्त्तापन के बन्धन में बाँधता है- **रजः कर्माणि भारत।** तीसरा अधम बन्धन है- नाभि से नीचे स्थूल शरीर और तामसिकता का बन्धन। उत्तम बन्धन सच्चे ज्ञान के अभाव के कारण होता है, मध्यम- राग-द्वेष, काम-क्रोध आदि के कारण और अधम बन्धन-तामसिकता के कारण तथा शरीर की सीमा में रहकर भोग भोगने आदि के कारण एवं आलस्य व प्रमादादि के कारण होता है। हमें इन तीनों ही बन्धनों से मुक्त होने का प्रयास करना चाहिए। इन बन्धनों के कट जाने के बाद हम-

उदुत्तमं मुमुग्धि नो वि पाशं मध्यमं चृत।
अवाधमानि जीवसे।

(ऋ. १-२५-२१)

उत्तम जीवन वाले बन जाएंगे। यही नहीं इससे- **आभृतम्-माधुर्य** (ऋ. १-२५-१७) हममें माधुर्य ही माधुर्य भर जाएगा। महर्षि दयानन्द जी ने 'वरुण' का अर्थ किया है-

'वृणोति भक्तान् व्रियते वा भक्तैः।'

(जिसे भक्त संसार के असंख्य आकर्षणों को छोड़कर चुनते हैं।)

इस प्रकार के गुणों को धारण करके जब व्यक्ति सुक्रतु बन जाता है तो वह- **परिज्मा- (परितः गन्ता)** अर्थात् सब क्षेत्रों में अपने कर्त्तव्य का पालन करने वाला बन जाता है और ऐसे कर्मशील व्यक्ति को ही परमात्मा प्रेम करते हैं। वेद में कहा गया है-

हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्।
नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्।।

(ऋ. ४-४०-५, यजु. १०-२४)

भावार्थ- जो जीव उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव वाले ईश्वर की आज्ञा के अनुकूल वर्त्ताव करते हैं वे ही परमेश्वर के साथ आनन्द को भोगते हैं। कठोपनिषद् में यमाचार्य भी आत्मा का उपदेश देते हुए कुछ ऐसा ही कहते हैं कि जो अजन्मा-साधु इस शरीर को ग्यारह द्वारों की नगरी समझकर यह चिन्तन करता है कि जैसे ये द्वार बाहर को खुलते हैं वैसे ही अन्दर को भी, वह अपने अनुष्ठान से इस संसार के शोक में नहीं पड़ता.... सदा के लिए मुक्त हो जाता है। यह जीवात्मा 'हंस' है, 'वसु' है, 'होता' है और 'अतिथि' है। दूसरे शब्दों में कहें तो यह व्यक्ति के विकास का क्रम है। हंस जिस प्रकार शुद्ध-पवित्र स्थान में रहता है, वैसे हंस-रूप जीव भी शुद्ध ब्रह्म में निवास करता है। वसु जैसे अन्तरिक्ष में निवास करते हैं, वैसे ही यह वसु-रूप जीव हृदय के अन्तरिक्ष में निवास करता है, होता जैसे वेदी के सामने बैठकर अग्निहोत्रादि करता है, वैसे होतृ-रूप जीव तीनों नचिकेत-अग्नियों का चयन करता है और अतिथि जैसे दुरोण-आश्रम की कुटिया को अपना समझकर नहीं बैठ जाता बल्कि अतिथि के रूप में रहता है, जीव भी इस कुटिया को, शरीर को सदा के लिए अपना समझकर नहीं बैठता बल्कि अतिथि बनकर उत्तरोत्तर विकास करता है।

उपरोक्त कथन को हम इस प्रकार से भी समझ सकते हैं कि वह नर-देह में निवास करता है, नर से अच्छे वर-देह में निवास करता है, उससे भी अच्छे ऋत्-देह में वास करता है और फिर उससे भी उत्कृष्ट व्योम-देह में वास करता है। विद्वानों ने इसकी संगति चार-आश्रमों के साथ

भी लगाई है-

१. हंसः शुचिसद्- इसे ही नरदेह कहा गया है। आचार्य के गर्भ में स्थित होकर ब्रह्मचारी शुचिता को प्रमुखता देकर ज्ञान-विज्ञान से परिपूर्ण होकर हंस जैसा नीर-क्षीर विवेकी बन जाता है।

२. वसु अन्तरिक्षसद्- इसे वरदेह कहा गया है। जैसे अन्तरिक्ष में वसु रहते हैं वैसे ही व्यक्ति गृहस्थाश्रम में अपना एक संसार बसाता है तथा अन्यों को भी सहयोग प्रदान करके बसाता है मगर फिर वह वानप्रस्थी होकर गृह-त्याग कर देता है।

३. होता वेदिसद्- इसे ही ऋत्-देह कहा गया है। समाज एवं संसार के कल्याण के लिए वह स्वयं अपनी आहुति ही दे देता है क्योंकि वह इस सत्य तक पहुँचने की यात्रा पर निकल पड़ता है कि ब्रह्म ही सत्य है। इस विवेक से ही ऋत् के साथ जुड़ जाता है और फिर-

४. अतिथि दुरोणसद्- इसे ही व्योम्-देह कहा गया है अर्थात् वह वित्तैषणा, पुत्रैषणा और लोकैषणा का पूर्णतया त्याग करके संन्यासी हो जाता है।

- महर्षि दयानन्द धाम, सुन्दरनगर, जि. मण्डी-१७४४०१ (हि.प्र.)

न्याय-दर्शन का अध्यापन

महर्षि गौतम प्रणीत **न्याय-दर्शन** और उस पर लिखा **वात्स्यायन-भाष्य** प्रमाण व अर्थतत्त्व को समझने की प्रक्रियाओं का सर्वाङ्गपूर्ण विवरण प्रस्तुत करता है। सभी वैदिक-अवैदिक दर्शनों को अपने मान्य सिद्धान्त प्रस्तुत करते समय इस पद्धति का प्रयोग करना अपेक्षित होता है। न्याय-दर्शन का मुख्य प्रतिपाद्य विषय 'प्रमाण' है। 'प्रमाण' को ठीक प्रकार जानने से ही तत्त्वनिश्चय ठीक हो पाता है, तभी मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त हो पाता है। प्रमाण ज्ञान से चिंतन-विचार की प्रक्रिया ठीक हो पाती है, नहीं तो अनजाने में मिथ्या सिद्धान्त गले पड़ जाते हैं। न्याय-दर्शन के अध्ययन से किसी भी बात की परीक्षा-समीक्षा की सामर्थ्य बढ़ती है और उचित-अनुचित का निर्णय सरलता-शीघ्रता-शुद्धता से हो पाता है। इस प्रकार यह शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति में अत्यन्त सहायक होता है।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में स्वामी विष्वङ् द्वारा (वैशाख शुक्ल द्वितीया २०७१, १ मई २०१४) से इसका विधिवत् नियमित संपूर्ण अध्यापन कराया जायेगा। यह दर्शन १०-११ महीनों में जून-जुलाई २०१४ तक पूर्ण होगा। इस बीच प्रत्येक अध्याय की लिखित परीक्षा भी ली जायेगी। कुल ५ परीक्षाएँ होंगी। इनमें ७५ प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वालों को '**न्यायाचार्य**', ६१ से ७५ प्रतिशत तक अङ्क वालों को '**न्याय-विशारद**' व ५१ से ६० प्रतिशत तक अङ्क वालों को '**न्याय-प्राज्ञ**' की उपाधि दी जायेगी। इस कक्षा में संस्कृत से परिचित साधक प्रकृति के ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी, संन्यासी पुरुष व महिलाएँ भाग ले सकते हैं। इसमें बुद्धिमान्, स्वस्थ, अपने कार्यों को स्वयं करने में समर्थ, सेवाभावी, अनुशासन में रह सकने वाले अधिकतम २० पूर्णकालिक व्यक्तियों का स्थान है।

इस काल में प्रातः व सायं उपदेश भी सुनने को मिलेगा। बीच-बीच में विभिन्न विद्वानों द्वारा अन्य विविध विषयों पर भी कक्षा एवं उपदेश होते रहेंगे। ब्रह्मचारियों, संन्यासियों व अन्य असमर्थों हेतु निवास व भोजन व्यवस्था निःशुल्क है। समर्थ प्रतिभागी इच्छानुसार सहयोग कर सकते हैं। माताओं-बहनों के लिए निवास की पृथक् व्यवस्था रहेगी। **सम्पर्क**-९४१४००३७५६ (स्वामी विष्वङ्) **सायं ५.३० से ६.००**। **पता**-ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर-३०५००१ (राज.), ईमेल-psabhaa@gmail.com

शब्द नित्य अथवा अनित्य

- वेदनिष्ठः

संसार में प्रारम्भ से ही पक्ष-प्रतिपक्ष प्रारम्भ हो गया था। तब से अब तक चला आ रहा है। पक्ष-प्रतिपक्ष के रूप में संसार को एक विवादों की नाट्यशाला कहने में अत्युक्ति नहीं होगी। पक्ष-प्रतिपक्ष होना जरूरी है। इसी को हमारे शास्त्रकारों ने अन्वय-व्यतिरेक प्रक्रिया से तत्व का निश्चय करना कहा है। यदि संसार में धर्म ही धर्म हो, अधर्म का सर्वथा अभाव माना जाये तो धर्म का महत्व ही समाप्त हो जायेगा। इसी प्रकार सत्य-नित्यादि की विशेषता जानने के लिए असत्य-अनित्यादि पक्ष होना जरूरी है। अत: तत्व को जानने हेतु पक्ष-प्रतिपक्ष (वाद) होना आवश्यक है। किसी भी वस्तु के एक स्वरूप में सदा-सर्वदा विवाद रहना कहाँ तक न्याय है? क्या यह हो सकता है कि परमात्मा ने ही एक स्वरूप में दो पक्ष रख कर वाद को उत्पन्न किया हो। सर्वथा नहीं। वेद में भी अन्वय-व्यतिरेक (पक्ष-प्रतिपक्ष) के द्वारा तत्व का निश्चय किया गया है ऐसा महर्षि दयानन्द के भाष्य से प्रतीत होता है।

निवृत्रा रुणधामहै। - ऋग्वेद १.८.२

अर्थ- निश्चित रूप से शत्रु को रोकें।

आर्यों का अनार्यों के साथ कैसा व्यवहार हो, इसमें अन्वय-व्यतिरेक की दृष्टि से ईश्वर का आदेश है कि शत्रुओं को रोकें। इसी प्रकार ऋषि-आप्त भी 'शब्द' को नित्य अथवा अनित्य कहे होंगे। परन्तु अर्वाचीन पण्डितंमन्य एक-दूसरे (नित्य और अनित्य) को विरोध मानकर एक-दूसरे दर्शनादि पर आक्षेप करते हैं। क्या ऋषियों, आप्तों ने एक-दूसरे के विरुद्ध लिखा होगा? क्या वे एक-दूसरे के विरोध में रचना किये हैं, ऐसा जानते और मानते हैं? क्या साथ ही वे ऋषि-आप्त के इस लक्षण को भी स्वीकार करते हैं।

रजस्तमोभ्यां निर्मुक्तास्तपोज्ञानबलेन ये।
येषां त्रिकालममलं ज्ञानमव्याहतं सदा।।
आप्ताः भिष्टा विबुद्धास्ते तेषां वाक्यमसंशयम्।
सत्यं वक्ष्यन्ति ते कस्माद् असत्यं नीरजस्तमा।।[१]

-चरक सूत्रस्थान ११.१८-१९

तप-ज्ञान बल के द्वारा जो रजोगुण-तमोगुण से रहित हो गये, जिनका ज्ञान सर्वदा तीनो कालों में बाधारहित शुद्ध पवित्र है। वे आप्त-शिष्ट-ज्ञानवान् कहे जाते हैं। उनका वाक्य संशय से रहित होता है। वे सदा-सर्वदा सत्य कहते हैं। वे असत्य क्यों कहेंगे, जब वे रज व तम गुण से रहित हैं।

यदि ये लक्ष्य ऋषि, आप्त के हैं। तो उन्होंने एक-दूसरे के विरुद्ध दर्शन शास्त्रादि की रचना की है, यह मानना निरर्थक है और एक-दूसरे के दर्शनादि पर आक्षेप करना व्यर्थ वितण्डामात्र है। नीरजस्तम ऋषि-मन्त्रद्रष्टा-यथार्थवक्ता-आप्त वास्तविक तथ्य का विरोध कैसे कर सकते हैं? उन्होंने अपने शास्त्र में जैसा कथन किया है, वह यथार्थ होना चाहिए। जैसे- आचार्य को कुछ शिष्य सुवक्ता, वागीश मानते हैं और कुछ शिष्य कुशल लेखक मानते हैं। तो क्या इसमें विरोध हो सकता है? कदापि नहीं। ये दोनों गुण एक आचार्य में हो सकते हैं।

किसी भी वस्तु का अपना जो वास्तविक स्वरूप है, उसमें दो भेद हो नहीं सकते हैं। शब्द को नैयायिक अनित्य तथा वैयाकरण और मीमांसक नित्य मानते हैं। अपने-अपने पक्ष की पुष्टि में वे जो प्रमाण देते हैं, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं-

अनित्य पक्ष-

आदिमत्वादैन्द्रियकत्वात् कृतकवदुपचाराच्च।

(न्या.द. २.२.१३)

कारण वाला = उत्पन्न धर्म से युक्त होने से, श्रोत्रेन्द्रिय से ग्रहण होने से और कार्य = अनित्य द्रव्य के जैसा व्यवहार होने से शब्द अनित्य है।

प्रागुच्चारणादनुपलब्धेः (न्या.द. २.२.१८)

उच्चारण करने से पूर्व शब्द प्राप्त नहीं होने से अनित्य है। अर्थात् उच्चारण के पश्चात् प्राप्त होता है और जो उच्चरित=उत्पन्न होगा वह नष्ट भी होगा। इस कारण शब्द अनित्य है। यदि शब्द नित्य है तो उच्चारण से पूर्व ज्ञान होना चाहिए।

उत्पत्तिधर्मकत्वादनित्य शब्द इति भूत्वा न भवति,
विनाशधर्मक इति।

(न्याय वात्स्यायन भाष्य २.२.१३)

उत्पत्ति धर्म से युक्त होने के कारण शब्द अनित्य है, वह उत्पन्न होकर नहीं होता, इस कारण विनाश धर्मवाला है।

उत्पत्तितिरोभवधर्मकः शब्दः।

(न्याय वात्स्यायन भाष्य २.२.१८)

उत्पन्न और नष्ट धर्म वाला है शब्द।

नित्य पक्ष-

औत्पत्तिकस्तु शब्दस्यार्थेन सम्बन्ध

(मीमांसा दर्शन- १.१.५)

शब्द का अर्थ के साथ सम्बन्ध नित्य है। अर्थात् शब्द नित्य होने से अर्थ के साथ नित्य सम्बन्ध है।

निरवयव हि शब्दः (मी.द. शाबरभाष्य १.१.१७)।

शब्द अवयव से रहित है, अतः नित्य है।

न च शब्दस्यान्तो न च क्षयो लक्ष्यते।.....तस्मान्नित्यः।

(मी. शाबरभाष्य १.१.२०)

शब्द का न अन्त है, न ही क्षय जाना जाता है। इस कारण नित्य है।

नैवं शब्दस्य किञ्चिद् कारणमवगम्यते,
यद् विनाशाद् विनङ्क्ष्यतीत्यवगम्यते।

(मी. शाबरभाष्य १.१.२१)

शब्द का कोई उत्पत्ति कारण नहीं जाना जाता है, जिसके नष्ट होने से शब्द नष्ट हो जाएगा, ऐसा जाना जावे।

सिद्धः शब्दोऽर्थः सम्बन्धश्चेति।

(महाभाष्य पस्पशाह्निक)

शब्द, अर्थ और शब्द-अर्थ का सम्बन्ध नित्य है।

नित्येषु नाम शब्देषु कूटस्थैरविचालिभिर्वर्णै-र्भरितव्यमनपायोपजनविकारिभिः।[२]

(महाभाष्य १.१.२०)

नित्य शब्दों में वर्णों का अविनाशी, देशान्तर प्राप्ति रहित, नाश-आगम-विकार से रहित होना चाहिए।

शब्द के इन नित्य और अनित्य के कथनों को बाह्य दृष्टि से देखकर अर्वाचीन पण्डितमानी जन एक-दूसरे दर्शनादि पर आरोप-प्रत्यारोप करते हैं। ऐसी स्थिति में हमें महाभाष्य का सार्वकालिक वचन द्रष्टव्य है-

व्याख्यानतो विशेष प्रतिपत्ति.... (म. पस्पशाह्निक)

व्याख्यान=विचार विमर्श से विशेष ज्ञान कर लेना चाहिए, सन्देह मात्र से विरोध ठीक नहीं। इसे न्याय भाष्यकार वात्स्यायन मुनि ने अन्य प्रकार से कहा- **प्रमाणैरर्थपरीक्षणम्** (न्याय दर्शन-१.१.१) प्रमाणों से किसी वस्तु की परीक्षा करनी चाहिए। इस विषय में मनु का कथन है-

यस्तर्केणानुसंधत्ते। (मनुस्मृति १२.१०६)

जो तर्क, कसौटी=ऊहापोह से अनुसन्धान=खोज करना है, वह वास्तविक तत्व को प्राप्त करता है। ऐसी ही मान्यता महर्षि देव दयानन्द की है। ईश्वर का भी इसमें आदेश है- **नु स्तोवाम।** (ऋ. ४.३९.१)

तर्क-वितर्क के साथ (राजा की) प्रशंसा करें। (म. दयानन्द भाष्य)

अन्वय-व्यतिरेक=तर्क-वितर्क=ऊहापोह से तत्व का निश्चय करना चाहिए। शब्द को नित्य मानने वाले वैयाकरणों ने इस हेतु से शब्द को नित्य कहा है क्योंकि ये तीन प्रकार की अनित्यता शब्द में दिखाई नहीं देती।

१. संसर्गानित्यता (रक्त वस्तु के संसर्ग से स्फटिक लाल दिखाई देता है और हटने पर लालपन नहीं रहता।)

२. परिणामानित्यता (हरा आम्रादि फल समय के अनुसार परिणमन होकर पीला हो जाता है।)

३. प्रध्वंसानित्यता (वस्तु का जो रूप था उस का सर्वथा नाश होना)३

शब्द के नित्यानित्य को लेकर पक्ष-प्रतिपक्ष हैं। शब्द तत्व का निश्चय करने से पूर्व 'शब्द' क्या है, इसमें कुछ विचार करते हैं। महाभाष्यकार महामुनि पतञ्जलि इस विषय में कहते हैं-

ध्वनिः स्फोटश्च शब्दानां..... उभयं तत्स्वभावतः।

(महा. १.१.७०)

शब्द के दो रूप हैं ध्वनि और स्फोट। ये दोनों स्वभाव से वर्तमान हैं। उन्होंने स्फोट के स्वरूप का वर्णन इस प्रकार किया है-

येनोच्चरितेन....संप्रत्ययो भवति स शब्दः।

(महा. पस्पशाह्निक)

जिसके उच्चरित होने से मस्तिष्क में सम्यक् ज्ञान होता है, वह स्फोट शब्द है। ध्वनि शब्द का वर्णन - **प्रतीतपदार्थको लोके ध्वनिः शब्दः** (महा. पस्पशाह्निक)

जिससे लोक में अर्थ का ज्ञान होता है, वह ध्वनि ही शब्द है।

अक्षरेभ्यः संस्काराः, संस्कारादर्थप्रतिपत्तिरिति।

(मीमांसा शाबर भाष्य १.१.५)

अक्षर से मस्तिष्क में संस्कार बनता है और संस्कार से अर्थ ज्ञात होता है।

इससे स्पष्ट है कि नैयायिक और वैयाकरण-मीमांसक के नित्यानित्य पक्ष में शब्द का स्वरूप भिन्न-भिन्न है। नैयायिक शब्द के ध्वनि पक्ष को लेकर उसे अनित्य कहते हैं और वैयाकरण-मीमांसक शब्द के स्फोट-संस्कार पक्ष को लेकर नित्य कहते हैं। इस दृष्टि से एक-दूसरे दर्शनादि पर आक्षेप करना व्यर्थ है। स्वयं भाष्यकार पतञ्जलि भी शब्द के नित्य और अनित्य दोनों पक्ष को मानते हैं।

द्वौ शब्दात्मनौ नित्यः कार्यश्च। (महा. पस्पशा.)

शब्द के स्वरूप दो प्रकार नित्य और कार्य अर्थात् अनित्य।

अद्येव नित्यः अथापि कार्यः,
उभयशाऽपि लक्षणं प्रवर्त्यमिति।

(महा. पस्पशा.)

शब्द चाहे नित्य होवे चाहे अनित्य, दोनों प्रकार से

शास्त्र का ही प्रवर्त्तन करना चाहिए। इस दृष्टि से स्पष्ट होता है कि शब्द के नित्य-अनित्य विषय में ऋषियों, आप्तों में मतभेद नहीं है। आचार्य श्री सत्यजित् जी का सदा मेरे ऊपर कृपाकटाक्ष बना रहता है, उनके मार्गदर्शन में यह लेख है।

टिप्पणियाँ

१. ऋषि-आप्त के अन्य लक्षण

(क) आप्तः खलु साक्षात्कृतधर्मा, यथा दृष्टस्यऽर्थस्य चिख्यापयिषया प्रयुक्त उपदेष्टा।। (न्याय द. वात्स्यायनभाष्य १.१.७)

(ख) साक्षात्कृतधर्मता भूतदया यथाभूतार्थ-चिख्यापयिषेति। (न्या. वात्स्या. २.१.६९)

(ग) आप्तेन दृष्टोऽनुमितो वार्थः परत्र स्वबोधसंक्रान्तये शब्देनोपदिश्यते।। (योगदर्शन व्यासभाष्य १.७)

(घ) साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः। (निरुक्त १.२०)

(ङ) एते वै विप्रा यदृषयः। (शतपथ १.४.२७)

(च) आर्योद्देश्यरत्नमाला क्र.नं. ८१ और स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश क्र.सं. ३८।

(छ) ऋषि=मन्त्रद्रष्टा अर्थात् साक्षात्कर्त्ता। (आर्याभिविनय १.४)

ऋषिशब्देन अत्र मन्त्रद्रष्टारः। (महाभाष्य-उद्योयोत टीका-४.१.७९)

अर्थापत्ति से ऋषित्वात् अर्थात् मन्त्रद्रष्टृत्वात्। (महा. प्रदीप टीका-४.१.११४)

(ज) आप्तो नामानुभवेन वस्तुतत्वस्य कार्त्स्न्येन निश्चयवान्। (परमलघुमञ्जूषा-शक्तिनिरूपण)

(स) आप्त यथार्थवक्ता। (तर्क-संग्रह)

जब ऋषि-आप्त इन विशेषणों से युक्त हों, फिर वो असत्य कैसे कहेंगे।

२. (क) कुछ पाठभेद से ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका-वेदनित्यत्वविचार।

नित्य के अन्य लक्षण

(ख) तदपि नित्यं यस्मिंस्तत्वं न विहन्यते। (महाभाष्य पस्पशा.)

(ग) ध्रुवं कूटस्थमविचाल्यनपायोपजनविकार्यनुत्पत्त्यवृद्ध्य व्ययियोगि यत् तन्नित्यम्। (महाभाष्य पस्पशा.)

३. महाभाष्य की टीका प्रदीप के अनुसार पस्पशाह्निक।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

प्रतिक्रिया

महोदय, परोपकारी अगस्त द्वितीय २०१३ दिनांक २५/८/२०१३ तक प्राप्त नहीं हुआ था। मैंने आपको इस सम्बन्ध में सूचित किया था, आपने तदनुसार द्वितीय प्रति करके भेज दिया था, जो मुझे प्राप्त हो गया है। कष्ट के लिए आपको मैं धन्यवाद करता हूँ। आपका कार्य सुव्यवस्थित है, इसके लिए आप विशेष प्रशंसा के पात्र हैं।

आपकी परोपकारी ने आर्य जगत् में वैदिक धर्म की दुन्दुभि बजा रखी है। जन जागृति अभियान तथा यज्ञों एवं योग द्वारा वैदिक पथ पर जनता को मनुष्य मात्र के उपकार के लिए प्रेरणा स्रोत बने हुए हैं। आपके विचार जो सम्पादकीय में तत्कालिक विषय पर खोज पूर्ण एवं प्रभावी होते हैं। आपने बहुत ही उचित लिखा है कि स्वतन्त्रता के बाद देश का विभाजन करना महात्मा गाँधी की बहुत बड़ी भूल नहीं गलती थी। जब उन्होंने यह कह दिया था कि देश का विभाजन मेरी छाती से होकर बनेगा फिर उन्हें अपना संकल्प तोड़ना नहीं चाहिए था। गाँधी जी ने अपना संकल्प तोड़ कर बहुत बड़ी गलती की। यदि पाकिस्तान नहीं बनते तब कश्मीर की समस्या भी नहीं होती और हिन्दू-मुसलमानों में परस्पर वैमनस्य नहीं होता और देश की प्रगति कई गुना अधिक होती, भेद भाव की गन्दी राजनीति में सुधार की सम्भावनाएँ बहुत होती। असली लोकतन्त्र होता। पाकिस्तान से धार्मिक भावना अधिक भड़कायी जाती हैं। देश के अन्दर मुसलमान हिन्दू मिलकर व्यवसाय करते थे। देश विभाजन की गलती क्या की कि फिर गलतियों पर गलतियाँ होती गई। पाकिस्तान दो भागों में पूर्व और पश्चिम में, कश्मीर उत्तर में, हैदराबाद दक्षिण में, गोवा आदि कई टुकड़ों में देश बंट गया था। तिब्बत को चीन निगल गया और हमने उफ्फ तक भी नहीं किया। नेपाल जो एक हिन्दू राष्ट्र होने का गर्व रखता था वह आज कम्युनिष्ट देश बन गया है। हिन्दू पुजारियों को भगा दिया गया है। चीन द्वारा भारत का ४० हजार किलोमीटर का क्षेत्रफल दबा लिया गया है। पूर्वांचल में नक्सलवाद चीन की देन है। आज भी हम अपने देश की सीमाओं की सुरक्षा ठीक प्रकार से नहीं कर पा रहे हैं। केन्द्र सरकार तथा उ.प्र. सरकार दोनों ही ने मुसलमानों की वोट बटोरने के लिए हिन्दुओं की बलि चढ़ा रही है। इतनी गन्दी राजनीति आज दुनिया के सबसे बड़े लोकतन्त्र में है। इतनी गन्दी राजनीति दुनिया में कहीं देखने को न मिल सकेगी। नेहरू और गाँधी की गलतियों की सजा यह देश आज भुगत रहा है फिर भी यह काँग्रेसी लोग इसे अभी भी समझ नहीं रहे हैं। तुष्टीकरण की नीति बाँटों और राज करो की नीति का रूप ले चुकी है।

सत्यपाल सिंह, एफ-३०, शास्त्री नगर, मेरठ, उ.प्र.-२५०००४

जिज्ञासा समाधान - ५७

-आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा १- (क) 'परोपकारी' अंक मार्च (द्वितीय) २०११ ई. में, पृ. २५ पर उल्लेखित श्री नन्दकिशोर एवं श्री उदयवीर सिंह की जिज्ञासाएँ, समाधान करते समय आपने अमैथुनी सृष्टि/उत्पत्ति बताते हुए केवल ईश्वरीय सर्वशक्तिमत्ता पर पूर्णत: आस्था बतायी है। आपने स्पष्टत: इन अनुमानों को अलग क्यों कर दिया, जो कुरान व बाईबिल में इनके हैं?

(ख) पौराणिक कथनों पर अविश्वास करने के सब वेद प्रमाणों सहित बताएँ कि सर्वप्रथम कौन पुरुष व महिला, सृष्टि उत्पत्ति के समय हुए? कैसे, कहाँ, कौन-कौन (कितने-कितने) आये? ऐसा वर्णन वेदों में क्या कहीं भी नहीं है? सम्भावना आकाश से आने की क्षीण प्राय: क्यों है?

(ग) 'जीवात्मा', 'जीव' और 'आत्मा' क्या तीनों पर्यायवाची शब्द हैं? यदि नहीं तो प्रत्येक की क्या परिभाषाएँ हैं?

(घ) 'गीता के अध्यायों में आर्यसमाज' आलेख 'परोपकारी' मई (प्रथम) २०११ में प्रकाशित होने के बावजूद, गीता को आर्ष ग्रन्थ क्यों नहीं माना जा रहा है? आर्ष ग्रन्थ किसे कहते हैं?

(ङ) 'मोक्ष', 'मुक्ति' समानार्थक हैं या पर्यायवाची जबकि 'आत्मा' को वेद, परमात्मा से पृथक्, अनादि, अनन्त कहता है। एक-एक आत्मा क्यों जीवन मुक्त अवस्था में देह धारण करेगी?

रमेश बंसल, ।।।/०६, बीसलपुर प्रोजेक्ट कॉलोनी, टोंक रोड, देवली-३०४८०४ (राज.)

समाधान- (क) अमैथुनी सृष्टि निश्चित रूप से ईश्वर की सर्वशक्तिमत्ता पर ही आधारित है। इसके अतिरिक्त कोई अन्य सम्भावना नहीं दिख रही। आप कुरान व बाईबल की बातों को भी पुष्ट करवाना चाहते हैं। आप की बात से ऐसा प्रतीत होता है कि आपको कुरान व बाईबल के विषय ठीक से ज्ञात नहीं है, यदि होता तो ऐसा न कहते। देखिये कुरान व बाईबल भी सृष्टि उत्पत्ति करने में ईश्वर को ही सर्वोपरि मानते हैं। किन्तु कुरान व बाईबल में जो सृष्टि उत्पत्ति का वर्णन है वह मुक्ति, तर्क व वेद विरुद्ध होने से अमान्य है। कुरान, बाईबल, तौरेत आदि ग्रन्थों में एक जैसी मान्यता है कि इस धरती पर मानवोत्पत्ति आदम और उसकी पत्नी हव्वा के रूप में हुई थी। तौरेत उ.प. २ आ. ७-९ में आदम को धूल से उत्पन्न हुआ लिखा है और तौ.उ.पं. २/आ.२१,२२ में हव्वा की उत्पत्ति आदम की एक पसली से हुई। इन दोनों से आगे मानव सृष्टि चली, ऐसी कुरान, बाईबल की मान्यता है। इनकी ये बातें विचारणीय हैं। इनके अनुसार तो सृष्टि का प्रारम्भ ही अनाचार से हुआ, क्योंकि एक आदम और हव्वा से जो लड़के-लड़कियाँ हुईं उन्होंने आगे चल कर आपस में संयुक्त हो सन्तान उत्पन्न की, ये अनाचार हुआ क्योंकि भाई-बहन का संयुक्त होना अनाचार ही है। इसलिए जो वैदिक रीति है कि ईश्वरीय सर्वशक्तिमत्ता से अमैथुनी सृष्टि में सहस्रों नर-नारी उत्पन्न हुए और उनसे मानव सृष्टि चली। आज भी इस पृथिवी पर मनुष्यों में भिन्न-भिन्न प्रजातियाँ मिल रही हैं, उससे भी ज्ञात होता है कि इनकी आदि उत्पत्ति एक जोड़े से न होकर अनेकों जोड़ों से हुई, इसको आज का विज्ञान भी स्वीकार करता है।

हव्वा की उत्पत्ति वाली बात भी मात्र कल्पना है कि उसको आदम की एक पसली से बनाया। हव्वा को आदम की एक पसली से बनाने की क्या आवश्यकता थी जैसे आदम को बनाया वैसे इसको भी बना देता क्योंकि ईश्वर तो सर्वशक्तिमान् है और यदि एक पसली से बनाया ही था तो आज सभी स्त्रियाँ एक पसली वाली क्यों नहीं? ऐसी-ऐसी कुरान व बाईबल की बातें मात्र कल्पना ही है, इसलिए इनके अनुमानों को पृथक् कर ईश्वरीय सर्वशक्तिमत्ता पर पूर्णत: आस्था दिखाई है।

और भी स्वामी विद्यानन्द जी के सत्यार्थ भाष्कर से लिखते हैं ''पुरुष के वीर्य का स्त्री के गर्भाशय में रज के साथ ठहर जाने से गर्भ उत्पन्न होता है, यदि कोई पदार्थ वेत्ता उन तत्वों को पूरी तरह जान ले, जो तीर्थ में हैं तो वह स्वतन्त्र रूप से वीर्य बना सकता है। उस अवस्था में पुरुष के वीर्य की आवश्यकता न रहेगी। ...... परन्तु कोई भी मनुष्य पूर्ण ज्ञानी न होने से ऐसा नहीं कर सकता। हाँ सर्वज्ञ, सर्वव्यापक तथा सर्वशक्तिमान् परमेश्वर के लिए यह कोई कठिन कार्य नहीं है।'' यही मान्यता युक्तियुक्त है, सर्वशक्तिमान् ईश्वर ने आदि सृष्टि में पृथिवी के गर्भ में प्राणियों की संरचना कर उत्पन्न किया।

(ख) पौराणिक कथनों पर अविश्वास इसलिए कि इनके सृष्टि उत्पत्ति विषयक कथन मिथ्या प्रलाप के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। इनके मिथ्या प्रलापों का कुछ दिग्दर्शन कराते हैं- शिव पुराण में सृष्टि रचना विषय में लिखा है- शिव ने एक जलाशय बनाया, जलाशय में से एक कमल

उत्पन्न हुआ, उस कमल में से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। ब्रह्मा ने जल में से अञ्जली भर कर पटकी तो उससे एक बुदबुदा उठा, उससे एक पुरुष (विष्णु) उत्पन्न हुआ। इस पुरुष ने ब्रह्मा से कहा कि हे पुत्र! सृष्टि उत्पन्न कर। इस पर ब्रह्मा ने कहा कि मैं तेरा पुत्र नहीं तू मेरा पुत्र है। दोनों एक दूसरे को पुत्र कहने लगे तो इसी बात पर युद्ध छिड़ गया।.... महादेव ने जैसे-तैसे युद्ध बन्द करवाया और अपनी जटाओं में से एक भस्म का गोला निकाल कर दिया और कहा कि इसमें से सृष्टि बनाओ। दोनों ने राख का गोला लिया और सृष्टि रच दी। अस्तु। यह कपोलकल्पना शिवपुराण में लिखी है, भला इसको कौन बुद्धिमान् मनुष्य मानेगा कि राख से मनुष्य आदि सृष्टि उत्पन्न होती है। यदि राख से सृष्टि उत्पन्न हुई है तो महादेव का शरीर किससे बना? महादेव ने जलाशय किससे उत्पन्न किया? जल के आधार को कैसे बनाया आदि-आदि अनेकों प्रश्न उत्पन्न होंगे जिनके उत्तर इन पुराणवादियों के पास नहीं है।

अब भागवत पुराण की पोपलीला देखिये कैसी विचित्र है। भागवत पुराण के तृतीय स्कन्द में सृष्टि उत्पत्ति का वर्णन है, उसमें लिखा है विष्णु की नाभि से कमल, कमल से ब्रह्मा, उस ब्रह्मा के दाहिने पग के अंगूठे से स्वायंभुव और बांये अंगूठे से शतरूपा रानी उत्पन्न हुई। ब्रह्मा के ललाट से रुद्र और मरीचि आदि दश पुत्र, उनसे दक्ष प्रजापति की उत्पत्ति हुई। दक्ष की तेरह लड़कियों का विवाह कश्यप से हुआ। उनमें से दिति से दैत्य, दनु से दानव..... वनिता से पक्षी, कद्रू से सर्प, सरमा से कुत्ते, स्याल आदि उत्पन्न हुए। और अन्य स्त्रियों से हाथी, घोड़े, ऊँट, गधा, भैंसा, घास-फूस, वृक्षादि उत्पन्न हुए।

इन सब बातों से ज्ञात होता है कि पुराण में सृष्टि उत्पत्ति विषयक कथन बिना सोचे-विचारे ही लिखा गया है। कोई भी विचारशील व्यक्ति इन बातों को स्वीकार नहीं कर सकता कि स्त्रियों से हाथी, घोड़े, गधे, वृक्षादि उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार के कथन बुद्धि के दिवालियेपन का लक्षण है। इसलिए पुराणों के कथन सर्वथा अविश्वास करने योग्य हैं और इस विषय में वेद और ऋषियों के कथन सर्वथा विश्वास के योग्य हैं।

सृष्टि उत्पत्ति विषयक मन्त्र वेद में अनेक हैं, जो विज्ञान के अनुकूल हैं। इसके लिए मुख्यरूप से ऋग्वेद का नासदीय सूक्त और यजुर्वेद का ३१वाँ पुरुषाध्याय द्रष्टव्य हैं। विस्तार भय से उन मन्त्रों को हम यहाँ नहीं लिख रहे।

सर्वप्रथम कौन स्त्री-पुरुष उत्पन्न हुए इसको बताने में हम असमर्थ हैं, इसका पता न लग पाया। किसी को ज्ञात हो तो अवश्य अवगत करायें। वैसे भी हम अपने ही दस-पन्द्रह पीढ़ी पूर्व के लोगों का नाम आदि नहीं जान पाते (जिनका सत्य इतिहास मिलता है उसको छोड़कर) तो लगभग १९६ करोड़ वर्ष पूर्व के लोगों का नाम आदि कैसे जानेंगे? आपने पूछा है उत्पन्न कैसे हुए? इसका उत्तर जिज्ञासा-समाधान १ में दिया जा चुका है। आप जानना चाहते हैं कहाँ उत्पन्न हुए? तो इसका उत्तर महर्षि दयानन्द के अनुसार त्रिविष्टप=तिब्बत क्षेत्र में उत्पन्न हुए। क्योंकि यही क्षेत्र सबसे ऊँचा और मानवोत्पत्ति के सर्वथा अनुकूल था। आज भी अनेक पाश्चात्य व भारतीय विद्वान् मानवोत्पत्ति का स्थान हिमालय को ही मानते हैं। कितने आये इसका उत्तर दे चुके कि युक्ति से ज्ञात होता है कि सहस्रों आये (उत्पन्न हुए)। इनके आकाश से आने की सम्भावना क्षीण प्रायः इसलिए है, क्योंकि इस पृथिवी पर रहने वाले शरीरों का उपादान कारण पृथिवी तत्व है इसलिए यहाँ के शरीर पार्थिव हैं। पार्थिव होने के कारण सृष्टि के आरम्भ में इनका पृथिवी से उत्पन्न होना युक्तियुक्त है।

(ग) जीव, आत्मा, जीवात्मा ये तीनों एक को ही कहने वाले हैं। जीव जो प्राणों को धारण करने वाला है, आत्मा- **अतति निरन्तरं कर्मफलानि प्राप्नोति, अतति गच्छति शरीरान्तरं वा** अर्थात् जो निरन्तर गतिशील है, कर्मफलों को प्राप्त करता है अथवा शरीरान्तर को प्राप्त होता है वह आत्मा कहाता है। ये सब बातें एक ही चेतन तत्व में घटित होती हैं। जब शरीर धारण करता है तब जीव वा जीवात्मा और जब शरीर धारण नहीं किये हुए तब आत्मा, इस प्रकार विभाग की दृष्टि से देखना चाहें तो देख सकते हैं अन्यथा तीनों ही पर्यायवाची शब्द हैं।

(घ) 'गीता के अध्यायों में आर्यसमाज' यह लेख लेखक ने गीता की वेदानुकूल बातों को लेकर लिखा था। आपको बता दें गीता एक स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं है यह महाभारत के भीष्म पर्व का कुछ भाग है। महाभारत मूलरूप से महर्षि व्यास का बनाया हुआ है। महर्षि व्यास ने इसको लगभग ५ हजार श्लोकों में रचा था। कालान्तर में महर्षि के शिष्यों ने ५ हजार श्लोक और बढ़ाकर इसको १० हजार श्लोक युक्त कर दिया था। १० हजार श्लोक युक्त को तो कुछ ठीक मान सकते हैं। किन्तु आज तक आते-आते यह एक लाख से ऊपर श्लोकयुक्त मिलता है। महाभारत में लगभग ९० हजार श्लोकों का प्रक्षेप हुआ जो अवैदिक और अनैतिक बातों से युक्त है। हमने कहा गीता स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं है, जब महाभारत में मिलावट है तो इसमें भी है। इसलिए मिलावट युक्त गीता को आर्य विद्वान् आर्ष ग्रन्थ नहीं कहते। हाँ यदि गीता में जो सिद्धान्त विरुद्ध बातें हैं उनको हटा विशुद्ध कर दिया जाये तो इसको भी आर्ष ग्रन्थ

कहा जा सकता है। क्योंकि मूल रचना ऋषि की है। ऋषि द्वारा रचित, लिखित, प्रणीत ग्रन्थ को आर्ष ग्रन्थ कहते हैं, साधारण मनुष्य कृत रचना को नहीं।

(ङ) मोक्ष और मुक्ति दोनों ही शब्द समानार्थक हैं, दोनों का ही अर्थ छूटना है। दु:खों से नितान्त छूट जाने को मोक्ष अथवा मुक्ति कहते हैं। योगाभ्यास द्वारा यह सम्भव है। आत्मा निश्चित रूप से परमात्मा से पृथक् और अनादि है किन्तु स्थान की दृष्टि से अनन्त नहीं है। जीवनमुक्त आत्मा देहधारण अपने पिछले कर्माशय के कारण करता है। इस शरीर के पश्चात् अगले शरीर प्राप्त न हों इसके समस्त कर्माशय को जीवनमुक्त आत्मा नष्ट कर चुका होता है किन्तु वर्तमान शरीर का कर्माशय नष्ट नहीं हुआ होता वह तो इस शरीर के नष्ट होने पर ही नष्ट होता है। इसलिए जीवनमुक्त आत्मा इसको परमात्मा की व्यवस्था मानकर शरीर धारण किये रहता है। जब तक शरीर में रहता है तब तक वह निरन्तर लोकोपकार करता रहता है और देह त्याग के पश्चात् परमात्मा के सान्निध्य मोक्ष में रहता है।

जिज्ञासा २- ऐसा वेदों में, प्रवचनों में, सत्संग इत्यादि में सुना है, पढ़ा है कि ईश्वर की बनाई कोई भी वस्तु, जीव, तत्व बेकार नहीं होता है और यह समाज प्रकृति अथवा जीव मात्र के लिए किसी न किसी दृष्टि से उपयोगी होता ही है।

इस सम्बन्ध में एक शंका उत्पन्न हुई है कि स्त्री एवं पुरुष के अलावा जो नपुसंक जाति है, जिन्हें कई नामों से पुकारा जाता है एवं प्रचलित शब्दों में इन्हें किन्नर या हिंजड़ा बोला जाता है, उनका समाज हित में क्या उपयोग हो सकता है जो कि अभी तक समाज ने नहीं पहचाना है या इस समाज ने उनकी वास्तविक उपयोगिता अभी तक आंकी ही नहीं है। इस समय ये प्रजातियाँ केवल नाच-गान इत्यादि करके अपना जीवन यापन कर रही हैं अथवा कुछ बेहूदी हरकतें करके समाज में डर पैदा करती हैं और यहाँ तक कहा जाता है कि इनकी बद्दुआऐं मत लो बहुत बुरा होता है। जो जीव खुद ही किसी बद्दुआ का मारा हो तो उसकी बद्दुआ किसी और को क्या लग सकती है? यह बात तो एक बार समझ में आती है कि इन्हें जरूर किसी पिछले बुरे कर्म की सजा मिली होगी लेकिन उसकी सजा में दया भी अवश्य होती है। यदि यह और स्पष्ट हो कि वेदों के अनुसार इनकी क्या उपयोगिता समाज अथवा प्रकृति के लिए हो सकती थी जिसे कि सही मायने में अभी तक पहचाना नहीं जा सका। क्या किसी भी काल में इनकी कोई उपयोगिता रही है? आशा है आप प्रश्न का भाव समझ गए होंगे। कृपया शंका समाधान करें।

- सुनील कुमार अरोड़ा, ५६/२२, रजत पथ, मानसरोवर, जयपुर-३०२०२० (राज.)

समाधान- हाँ आपने ठीक पढ़ा-सुना है कि परमेश्वर का कोई भी कार्य व्यर्थ नहीं होता, किसी न किसी दृष्टि से उपयोगी ही होता है। रही बात मनुष्यों में नपुसंक स्त्री-पुरुषों की, तो ये सन्तान उत्पत्ति को छोड़कर, वे सब काम कर सकते हैं जो काम एक साधारण मनुष्य करता है। परमेश्वर ने इनको भी अपनी उन्नति करने की उतनी ही स्वतन्त्रता दे रखी है जितनी की अन्य मनुष्यों को। ये भी डॉक्टर, इंजीनियर, जज, वकील, प्रबन्धक, अध्यापक, विद्वान्, साधक, योगी, समाधिस्थ बन मुक्ति को प्राप्त कर सकते हैं, यह क्षमता इनमें भी है।

वर्तमान में जो अवस्था इनकी देखी जा रही है, उस अवस्था के वे अकेले दोषी नहीं हैं, इनके साथ-साथ समाज भी दोषी है कि उनको अपने से पृथक् कर एक वर्ग विशेष में रख दिया। समाज ने इनको वह सम्मान न दिया, वह व्यवहार न किया जो एक मनुष्य को देना चाहिए, करना चाहिए। इनको हीन दृष्टि से देखकर हेय कर दिया। यदि आज भी समाज इनके प्रति आत्मीयता का भाव रखकर प्रेम से बदलना चाहें तो ये बदल सकते हैं। ये भी नाच-गान विपरीत चेष्टाएँ छोड़कर अपनी आजीविका सभ्यता पूर्वक कर सकते हैं। इनमें सभी विपरीत चेष्टाएँ करने वाले नहीं होते, कुछ अच्छे भी होते हैं। देखने में आता है कि ये भी साधु-संन्यासियों के प्रति आदर-सत्कार का भाव रखते हैं, उनके सामने विपरीत चेष्टायें आदि भी नहीं करते।

हाँ ये अवश्य है कि यह इनके बुरे कर्मों का फल है जो इनको ऐसी अवस्था प्राप्त हुई है। इस अवस्था में भी इनके ऊपर परमेश्वर की पूरी दया है कि इनको मनुष्य शरीर मिला है। ये इस शरीर को पाकर अधिक श्रेष्ठ कर्म कर, ज्ञान को प्राप्त कर, इससे श्रेष्ठ शरीर को प्राप्त कर सकते हैं। वैदिक मान्यता अनुसार इनकी उपयोगिता जैसी ऊपर कही गयी है वैसी हो सकती है यदि इनके विषय में ध्यान दिया जाये, तो प्रकृति के लिए जैसे अन्य शरीरधारियों की उपयोगिता है, वैसी इनकी भी उपयोगिता है। इतिहास ग्रन्थों से भी इनके विषय में ज्ञात होता है कि ये भी युद्धादि और राजकार्यों में भाग लेते थे। ऐसा पहले था तो अब क्यों नहीं हो सकता।

जिज्ञासा समाधान लिखने में मुझे प्राय: **श्रद्धेय आचार्य सत्यजित् जी** का सहयोग प्राप्त होता रहता है, एतदर्थ आचार्य श्री का आभार, धन्यवाद।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

संस्था - समाचार

१६ से ३१ जनवरी २०१४

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान, अजमेर में होने वाली क्रियाओं का संक्षिप्त उल्लेख इस लेख में किया जा रहा है। प्रात:काल से ही ईश्वर-भक्ति-भजन एवं वैदिक मन्त्रों से गुंजायमान इस आश्रम में यज्ञ एवं प्रवचन का क्रम चलता आ रहा है। प्रात: यज्ञोपरान्त यजुर्वेद के ३१वें अध्याय (पुरुष-सूक्त) के मन्त्रों की व्याख्या करते हुए **डॉ. धर्मवीर जी** ने बताया कि वह ईश्वर अनन्त सामर्थ्य, अनन्त ज्ञान, अनन्त शक्ति वाला है। इसका प्रमाण प्रस्तुत करते हुए **सहस्रशीर्षा पुरुष: सहस्राक्ष:....।।** इस मन्त्र को बताया। इस मन्त्र में यदि हम सामान्य रूप से अर्थ करें तो वह ईश्वर हजारों सिरों, हजारों आँखों, हजारों पैरों इत्यादि पुरुष रूप वाला बनता है। किन्तु जो एक पुरुष का चित्र होता है, अनुपात होता है वह इस मन्त्र में घटित नहीं होता है, तो क्या यह वेदमन्त्र गलत है? नहीं। कुछ और अन्य अर्थ होगा, क्योंकि शास्त्र कहते हैं ''**बुद्धिपूर्वा वाक्य कृतिर्वेदे**'' अर्थात् वेदों में वाक्यों की रचना बुद्धिपूर्वक की गयी है। वेद कभी गलत नहीं हो सकते। तब क्या अर्थ लगेगा, वह ईश्वर (पुरुष) हजारों सिरों से भी अधिक ज्ञानवाला, हजारों पैरों से भी अधिक गति वाला है।

सामान्य पुरुष वेदों का ठीक-ठीक अर्थ करने में अक्षम होता है। क्योंकि वह उन शब्दों का अर्थ ढूंढ़ने के लिए आधुनिक वा पाश्चात्य शब्दकोष का चयन करता है जिससे मूल अर्थ नहीं निकाल पाता। वेदों का अर्थ करने के लिए ईश्वर पर पूर्ण विश्वास, संस्कृत व्याकरण, दर्शन, उपनिषदों आदि आर्ष ग्रन्थों का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक होता है। अर्थ के सम्यक् बोध के लिए उस मन्त्र का देवता, छन्द, ऋषि आदि जानना व निघण्टु, निरुक्त का ज्ञान होना आवश्यक होता है और जो इनको जाने बिना अर्थ निकालता है तो वेद भी उससे डरता है- **बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो: मामयं प्रहरिष्यति।** वेद अल्प सुने, अल्प जानने वाले से डरता है।

सांयकालीन यज्ञोपरान्त व्याख्यान **आचार्य कर्मवीर जी** के द्वारा बड़े ही सरल, रोचक व धार्मिक सज्जनों की जिज्ञासाओं के समाधान से सम्पन्न होता है। सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास के अन्तर्गत आचार्य जी ने बताया कि जो मनुष्य ब्रह्मचर्य का सेवन करता है वह सब रोगों, दु:खों से रहित होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होता है। परन्तु जो दुष्टाचार-अजितेन्द्रिय होते हैं उनके त्याग, यज्ञ, नियमों का पालन, तप करना आदि अन्य अच्छे काम कभी सिद्धि को प्राप्त नहीं होते। अभिवादन के सम्बन्ध में आचार्य जी ने बताया कि जिन पुरुषों का स्वभाव से ही अभिवादन करना होता है किसी स्वार्थवशात्, दिखावापन नहीं होता है, वे ही पुरुष आयु, विद्या, यश और बल की वृद्धि को प्राप्त होते हैं। समाज में जो व्यक्ति अपने स्वार्थसिद्धि हेतु किसी को अभिवादन या सम्मान देते हैं, अन्य समय उपेक्षा या अवहेलना करते हैं, ऐसे व्यक्ति कुछ काल के लिए सुख को प्राप्त कर सकते हैं परन्तु पश्चात् उनका अपयश, हानि अवश्य होती है।

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जयन्ती:- महापुरुषों के जीवन-चरित्र, घटनाओं, प्रेरणास्पद वाक्यों को स्मरण में सदैव विद्यमान रखे रहना चाहिए, जिससे कि हम अधोपतन, निम्नस्तर, निम्न सोच की ओर न जाकर उन्नति की ओर बढ़ें। उसी क्रम को जारी रखने के लिए २३ जनवरी को ऋषि उद्यान में 'सुभाष चन्द्र बोस जी' की जयन्ती मनाई गई। उनके द्वारा किये गये कार्यों, अदम्य साहस, देश के प्रति निष्ठा, मानवता के प्रति श्रद्धा आदि अनेकों बिन्दुओं पर **आचार्य कर्मवीर जी** ने प्रकाश डाला। आत्मबल, बौद्धिक प्रतिभा के धनी, मेधावी, आजाद हिन्द फौज के गठनकर्त्ता 'बोस' ने देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने सुखों को त्यागकर, कष्ट के दिनों को झेलकर समस्त राष्ट्रवासियों को एक सन्देश उस समय दिया था कि ''**तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।**'' ऐसे महान् क्रान्तिकारी को सभी लोगों ने अपनी तरफ से शतश: धन्यवाद प्रकट किया।

भ्रमण-यात्रा के अनुभव:- अजमेर नगर में हरिजन बस्ती के प्रचार-प्रसार अनुभवों, प्रश्नोत्तरों को शनिवासरीय प्रवचन में वानप्रस्थी **श्री मुमुक्षु मुनि जी** ने व्यक्त किया। वहाँ के निवासियों से खान-पान के सम्बन्ध में मुनि जी ने पूछा कि गुटखा, मांस-भक्षण, दुर्व्यसनों से क्या-क्या लाभ हैं? उत्तर न मिलने पर मुनि जी ने हानियों की लड़ियाँ बिछा दीं। दुर्व्यसनों से, गुटखे से मुँह की कोशिकाओं का संकुचन, मांस में गाँठें, जलन, बेचैनी इत्यादि अनेकों रोग मनुष्य के पास आ जाते हैं। मदिरा कैसे बनती थी? अब कैसे प्रचलन में है? उसकी हानियाँ जैसे कि फेफड़े, किड़नी को खराब करना, टी.बी. आदि अनेकों रोगों को उत्पन्न करना इत्यादि अनेकों विषयों पर प्रकाश डाला व वहाँ पर बैठे अनेकों नवयुवकों से दुर्व्यसनों को छोड़ने का संकल्प

भी करवाया।

गणतन्त्र दिवसः- अंग्रेजों के चुंगल से मुक्त होने के बाद २६ जनवरी १९५० को हमारे देश में एक ऐसा संविधान लागू किया गया जो कि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के लिए, नियम के लिए, सुचारू व्यवस्था चलाने के लिए बनाया गया। **माननीय कार्यकारी प्रधान डॉ. धर्मवीर जी** ने ६५वें गणतन्त्र दिवस के अवसर पर प्रातः यज्ञोपरान्त अपने प्रखर विचारों से सभी को लाभान्वित किया। आपने बताया कि ईश्वर के द्वारा बनाये गये नियम पूर्ण एवं शाश्वत होते हैं। किन्तु मनुष्य के द्वारा बनाये गये नियम अपूर्ण, नश्वर व परिवर्तनशील होते हैं। इसका साक्षात् हम अपने ही संविधान में ही देख सकते हैं। जो कि अब तक ८४ बार संशोधित कर दिया गया है। गणतन्त्र का अर्थ गण=समूह और तन्त्र= व्यवस्था। अर्थात् समूह में रहने वाले लोगों की जहाँ पर व्यवस्था चलती है वह गणतन्त्र कहलाता है। तन्त्र अनेकों प्रकार के होते हैं। गणतन्त्र, राजतन्त्र, कुलीनतन्त्र आदि। राजतन्त्र के अन्दर एक व्यक्ति विशेष होता है जो राजवंश परम्परा से चलता चला आता है वही राजा होता है और देश का कार्यभार सम्भालता है, युवराज बनता है। परन्तु जो गणतन्त्र होता है इसमें प्रजा का ही कोई व्यक्ति राजा बनता है, इस तन्त्र का शासक वंश परम्परागत नहीं होता है। इस तन्त्र की एक विशेषता है कि इसमें अन्तिम व्यक्ति भी पहला व्यक्ति बन सकता है। आज साक्षात् उदाहरण हम देख सकते हैं- 'नरेन्द्र मोदी' जिसे कि लोग चाय बेचने वाला कहते हैं, भूतपूर्व राष्ट्रपति 'डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम' जिसे अखबार बेचने वाला कहते हैं, उन्होंने अन्तिम होते हुए भी प्रथम पद को प्राप्त किया, यह विशेषता अन्य तन्त्रों की अपेक्षा सर्वश्रेष्ठ है। इस संविधान के अन्दर कुछ त्रुटियाँ भी हैं, जैसे कि आरक्षण। हमने इस नियम को १० साल के लिए स्वीकार किया था, लेकिन आज ६४ वर्षों तक भी हम उसे ही मान रहे हैं, जिससे कि जातिवाद, अल्पसंख्यक, बहुसंख्यक आदि अनेकों समस्याएँ आ गई हैं। दूसरा बिन्दु- शिक्षा, जो कि हमने अंग्रेजी को भी स्वीकारा व अब अनेकों जगहों पर प्रधानता भी कर ली है। तीसरा बिन्दु- देश रक्षा-सम्बन्धी गलत बातों, निर्णयों, प्रस्तावों में सहमति जताई। चौथा बिन्दु- कृषि, गौ-रक्षा सम्बन्ध में गलत कानूनों, निर्णयों का भी समर्थन करने, होने दिया, जिसका दुष्परिणाम आज हम समाज में देख रहे हैं। पाँचवा बिन्दु- न्याय व्यवस्था की गलत प्रक्रिया को हमने समर्थन दिया। अन्य देशों की अपेक्षा हमारे देश में निर्णय प्रक्रिया ढ़ीली व कमजोर है। ऐसे अन्य भी देश हैं जहाँ तीन बार में ही निर्णय ले लिया जाता है और हमारे देश में स्वतन्त्रता से पहले के भी मुकदमें आज चल रहे हैं, क्यों? इत्यादि अनेकों बिन्दुओं पर माननीय डॉ. धर्मवीर जी ने प्रकाश डाला व श्रद्धाञ्जलि, नम्रता, कृतज्ञता का भाव व्यक्त किया।

२६ जनवरी को ही सायंकालीन सत्र में ब्र. सत्यवीर जी ने १८५७ की क्रान्ति का महत्वपूर्ण योगदान व उस क्रान्ति के असफलता के कारणों पर प्रकाश डाला। मनुस्मृति के द्वितीय अध्याय के अन्तर्गत नामकरण संस्कार के विषय में **आचार्य सत्येन्द्र जी** ने बहुत ही सरलता से बताया। बालकों, बालिकाओं का नाम कैसा, कितने अक्षरों का, कौन-कौन से शब्दों वाला होना चाहिए? इन सभी का समाधान शास्त्रोक्त विधियों को बताकर किया। ब्राह्मण का नाम शुभत्व-श्रेष्ठत्व भावबोधक शब्दों वाला, क्षत्रिय का नाम बल, पराक्रम भावबोधक शब्दों वाला, वैश्य का नाम धन-ऐश्वर्य भावबोधक शब्दों वाला, शूद्र का नाम रक्षणीय, पालनीय भावबोधक शब्दों वाला होना चाहिए।

- ब्र. अमित आर्य

बिल्कुल सच!

- सत्यदेव प्रसाद आर्य 'मरुत'

ऋषिवर का सत्यार्थ प्रकाश,
संस्कृति प्रदत्त पावन जल है।
तृषा मिटाये-शीतलता दे,
हितकारी अति निर्मल है।।

दुग्ध समान नवजात शिशु हित,
पथ्य है समुचित पोषक है।
हर पाठक का निर्विवाद यह,
उत्प्रेरक-हितचिन्तक है।।

तथ्य-सत्य सब ऋषि मुनियों का,
अपनी ओर से कुछ जोड़ा ना।
तर्क संगत आवश्यक बिन्दु को,
संग्रह करने में छोड़ा ना।।

भेद भाव बिन हर पन्ने से,
संस्कार भरने वाला।
अक्षर-अक्षर श्रुति सम्मत जो,
लगे सिर्फ खलने वाला।।

मानोगे तो सुख पाओगे,
किञ्चित् होगी नहीं हानि।
पढ़ो निरन्तर! सोचो-समझो,
हरो सम्भावित वर्णित ग्लानि।।

- नेमदारगंज, नवादा, बिहार

आर्यजगत् के समाचार

१. आवश्यकता- महात्मा गाँधी मार्ग आर्यसमाज अकोला द्वारा संचालित डी.ए.वी. इंग्लिश स्कूल में नर्सरी से कक्षा १०वीं तक शिक्षा की व्यवस्था है। अभी स्कूल में लगभग ९०० विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। इस विद्यालय में विविध कार्यक्रमों के साथ वैदिक विद्वानों के प्रवचन, शिविर आदि का भी आयोजन किया जाता है। इस समय स्कूल में धर्मशिक्षक न होने से विद्यार्थियों पर वैदिक संस्कारों का प्रभाव अच्छी तरह से नहीं हो पा रहा है। धर्मशिक्षक की योग्यतानुसार उसे उचित मानधन दिया जायेगा एवं उनके निवास का भी उचित प्रबन्ध किया जायेगा। धर्मशिक्षक के साथ-साथ पुरोहित का कार्य भी आवश्यक है। धर्मशिक्षक तथा पुरोहित के कार्य को सम्पन्न करने योग्य धर्मशिक्षक की आवश्यकता है। सुयोग्य व्यक्ति सम्पर्क करें। सम्पर्क- ०९२१८३०५६१, ०९४२२८९३१२८

२. अध्ययन प्रारम्भ- आगामी १ मई २०१४ से 'श्रुति विज्ञान आचार्यकुलम् (गुरुकुल)' ग्रा. छपरा, तह. शाहबाद मार्कण्डा कुरुक्षेत्र, हरियाणा में शतपथ ब्राह्मण का अध्ययन-अध्यापन प्रारम्भ होने जा रहा है। अध्ययन का समय लगभग २ वर्ष रहेगा। विद्यार्थियों के निवास एवं भोजन की सामूहिक व्यवस्था गुरुकुल की ओर से नि:शुल्क रहेगी। विद्यार्थियों से निवेदन है कि वे निम्न पुस्तकें अपने साथ लेकर आयें। १. शतपथ ब्राह्मण- सायण भाष्य सहित (राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान दिल्ली से प्रकाशित) २. दर्शपौर्णमास पद्धति- पं. भीमसेन शर्मा (रामलाल कपूर ट्रस्ट रेवली, सोनीपत से प्रकाशित) पढ़ने के इच्छुक विद्यार्थी सम्पर्क करें। **आचार्य वेदव्रत, चलभाष**-०९४१६४८८२६२, समय-मध्याह्नोत्तर ३ से ५ बजे तक।

३. सम्मानित- भारत के राष्ट्रपति महामहिम प्रणव मुखर्जी ने १७ जनवरी मध्याह्न १२ बजे राष्ट्रपति भवन में अन्य विद्वानों के साथ आचार्य डॉ. जयदेव वेदालंकार को राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित किया।

डॉ. जयदेव वेदालंकार दर्शन शास्त्र, वैदिक साहित्य, धर्म और संस्कृति के उद्भट विद्वान् हैं। इन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। जिनमें वैदिक दर्शन, उपनिषदों का तत्वज्ञान, भारतीय दर्शन, ज्ञान मीमांसा एवं तत्व मीमांसा के मौलिक सम्प्रत्यय भारतीय दर्शन का इतिहास (पाँच खण्ड का) वैदिक संस्कृति और विश्व संस्कृति की खोज आदि अनेकों ग्रन्थों का सृजन किया है।

डॉ. जयदेव वेदालंकार को अन्य भी अनेक राष्ट्रीय पुरस्कार पूर्व में मिले हैं। जैसे वेदरत्न पुरस्कार (बैंगलूर, कर्नाटक), वेद वेदांग पुरस्कार (नासिक, महाराष्ट्र)। आर्य साहित्य पुरस्कार मुम्बई, विशेष पुरस्कार उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी, वर्ष का उत्तम ग्रन्थ, आई.पी.पी.आर. नई दिल्ली और स्वामी प्रणवानन्द दर्शन पुरस्कार अखिल भारतीय दर्शन परिषद् आदि अनेक संस्थानों ने पुरस्कार प्रदान किये हैं।

आचार्य जयदेव वेदालंकार, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अनेक उच्च पदों जैसे डीन प्राच्यविद्या संकाय, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष दर्शन विभाग और कुल सचिव आदि पदों पर प्रशासनिक कार्यों को सफलतापूर्वक निर्वहन करते रहे हैं।

यह ज्ञातव्य है कि डॉ. जयदेव का जन्म एक सामान्य किसान परिवार में हुआ था। उन्होंने अत्यधिक परिश्रम करके अपने आचार्यों का आशीर्वाद प्राप्त किया है। आप स्व. स्वामी आत्मानन्द सरस्वती, आचार्य प्रियवत, सुखदेव विद्यावाचस्पति और आचार्य रामनाथ वेदालंकार (इन्हें भी राष्ट्रपति पुरस्कार मिला था) आदि आचार्यों के प्रिय शिष्य रहे हैं। ये एक विनम्र स्वभाव के व्यक्तित्व के धनी हैं। आप अनेक सामाजिक संगठनों में सेवा प्रदान करते हैं। आप एक एन.जी.ओ. के संस्थापक अध्यक्ष हैं। आपने इस ट्रस्ट के द्वारा अनेकों विद्वानों एवं संस्थाओं को सम्मानित किया है।

४. शिविर का आयोजन- आनन्दधाम (गढ़ी आश्रम) उधमपुर, जम्मू में महात्मा चैतन्यमुनि जी के सान्निध्य में दिनांक ७ से १४ अप्रैल २०१४ तक नि:शुल्क योग-ध्यान-साधना शिविर का आयोजन किया गया है। जिसमें अनुभवी आचार्यों एवं महात्माओं द्वारा उपासना, प्राणायाम, योगासन आदि कराए जायेंगे तथा दर्शन-पठन-पाठन की भी व्यवस्था है। साधक अपनी शंकाओं का समाधान भी कर सकेंगे। आश्रम में महात्मा जी के सान्निध्य में पहले लगाए गए शिविरों में शिविरार्थियों के बहुत अच्छे अनुभव रहे हैं अत: इच्छुक साधक विस्तृत जानकारी व अपना स्थान आरक्षित करने के लिए सम्पर्क करें। चलभाष ०९४१९१०७७८८, ०९४१९७९६९४९, ०९४१९१९८४५१।

५. अभिनन्दन- डॉ. स्वामी गुरुकुलानन्द कच्चाहारी का मकर संक्रान्ति के अवसर पर संन्यास आश्रम मेरठ में दीक्षा के ३० वर्ष पूर्ण होने पर उनका नागरिक अभिनन्दन डॉ. पीताम्बर अवस्थी एवं श्रीमती भारती सिंह की ओर से किया गया। कार्यक्रम में आचार्य गंगादत्त जोशी, कृपालदत्त उप्रेती, डॉ. आनन्दी जोशी, कवयित्री आशा सौन आदि ने

भाग लिया।

६. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्य बाल मन्दिर बूढ़ा, जि. मन्दसौर, (म.प्र.) द्वारा वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य में २३ से २९ दिसम्बर २०१३ तक यज्ञ, खेलकूद, मन्त्र व श्लोक वाचन, स्मृति प्रतियोगिता, तत्काल भाषण और वाद-विवाद इत्यादि विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। २ जनवरी २०१४ को विशेष सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित हुआ। कार्यक्रम में दी गई प्रस्तुतियों का मूल्यांकन कर प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त छात्रों को पुरस्कृत किया गया। इस मौके पर सभी क्षेत्रीय व दूरग्रामवासियों ने अधिकाधिक संख्या में पधारकर कार्यक्रम की सराहना की। कार्यक्रम के अन्तिम चरण में समिति अध्यक्ष व प्राचार्य महोदय ने सभी आगन्तुकों का आभार व्यक्त किया।

७. वैदिक शोध संगोष्ठी व वार्षिकोत्सव सम्पन्न- पूर्व वर्षों की भाँति इस वर्ष भी मकर संक्रान्ति के पावन पर्व एवं प्रभात आश्रम के संस्थापक पूज्य स्वामी समर्पणानन्द जी के स्मृतिदिवस के उपलक्ष्य में गुरुकुल प्रभात आश्रम में दिनांक १३-१४ जनवरी २०१४ को राष्ट्रीय वैदिक शोध-संगोष्ठी का आयोजन एवं वार्षिकोत्सव के अवसर पर अथर्ववेद पारायण यज्ञ का अनुष्ठान किया गया। इस वर्ष शोध-संगोष्ठी का विषय था- **वैदिक वाङ्मय में भूगोल।** गोष्ठी में विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों से पधारे विद्वानों ने शोधपत्र पढ़े। १४ जनवरी को अथर्ववेद पारायणयज्ञ की पूर्णाहुति के साथ नूतन ब्रह्मचारियों का उपनयन तथा वेदारम्भ संस्कार सम्पन्न हुआ। प्रसिद्ध आर्य भजनोपदेशकों के भजन, व्याख्यान एवं ब्रह्मचारियों के विविध आकर्षक बौद्धिक एवं शारीरिक बलप्रदर्शनादि के कार्यक्रम दर्शकों को देखने को मिले। इस अवसर पर गुरुकुल के स्नातक ब्र. प्रमोद को सुखाड़िया वि.वि. राजस्थान में स्नातकोत्तर श्रेणी में स्वर्ण पदक प्राप्त करने पर, ब्र. सत्यदेव को यू.बी.आई. लखनऊ में सहायक प्रबन्धक होने पर तथा ब्र. भोजराज, ब्र. विपिन एवं ब्र. वेदांशु को राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा (नेट) के अन्तर्गत कनिष्ठ शोध छात्रवृत्ति (जे.आर.एफ.) प्राप्त करने पर सम्मानित किया गया। कार्यक्रम शान्तिपाठपूर्वक सम्पन्न हुआ।

८. शिविर सम्पन्न- आर्यसमाज अकोला द्वारा संचालित डी.ए.वी. इंग्लिश स्कूल में दि. २७ से २९ दिसम्बर २०१३ को चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व विकास शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर में अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त वैदिक विद्वान् स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक द्वारा स्कूल के छात्र-छात्राओं तथा शिक्षकवृन्दों को 'जीवात्मा, परमात्मा एवं प्रकृति' इस विषय पर सरल भाषा में बहुमूल्य मार्गदर्शन किया। साथ ही डॉ. सन्दीप चांडक ने छात्रों को तथा डॉ. माधुरी चांडक ने छात्राओं को अल्प वयस्क एवं वयस्क युवाओं की समस्या और उनके समाधान पर मार्गदर्शन किया। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने गौरक्षा एवं गौवंश का मानव जीवन में महत्व तथा उपयोगिता पर मार्गदर्शन किया। आर्यसमाज एवं स्कूल की प्रधाना डॉ. मंजुलता विद्यार्थी ने मांसाहार की विभीषिका पर विस्तार से मार्गदर्शन किया। शिविर का समापन स्कूल के सचिव डॉ. दिलीप मानकर ने किया।

९. प्रतियोगिता सम्पन्न- २८-२९ दिसम्बर २०१३ को श्रीमद्दयानन्द आर्ष गुरुकुल खेड़ा खुर्द, दिल्ली-८२ में संस्कृत प्रतियोगिता सम्पन्न हुई। प्रतियोगिता में दिल्ली, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल व हरियाणा के प्रतिभागियों ने भाग लिया। काशिका का प्रथम व द्वितीय पुरस्कार व प्रथमावृत्ति द्वितीय खण्ड का प्रथम पुरस्कार गुरुकुल खेड़ा खुर्द के छात्रों ने प्राप्त किए। धातुवृत्ति का प्रथम पुरस्कार रेवली गुरुकुल तथा अष्टाध्यायी का प्रथम पुरस्कार गुरुकुल कुरुक्षेत्र के छात्रों ने प्राप्त किया। धातुवृत्ति का द्वितीय पुरस्कार तथा अष्टाध्यायी का द्वितीय पुरस्कार क्रमशः गुरुकुल कुरुक्षेत्र के छात्रों ने तथा गुरुकुल खानपुर के छात्रों ने प्राप्त किया। प्रथमावृत्ति प्रथमखण्ड का प्रथम पुरस्कार गुरुकुल कुरुक्षेत्र और द्वितीय पुरस्कार गुरुकुल रेवली के छात्रों ने तथा प्रथमावृत्ति द्वितीयखण्ड का द्वितीय पुरस्कार गुरुकुल खानपुर के छात्रों ने प्राप्त किया।

१०. चतुर्वेद शतक यज्ञ- आर्यसमाज स्वामी दयानन्द मार्ग, श्रीगंगानगर (राज.) द्वारा चतुर्वेद शतक यज्ञ एवं वेद प्रचारोत्सव २७ फरवरी से २ मार्च २०१४ तक आयोजित किया जा रहा है। इसमें आचार्य श्री महावीर मुमुक्षु , श्रीमती सुदेश आर्या भजनोपदेशिका दिल्ली आदि विद्वानों को आमन्त्रित किया गया है। ब्राह्म महाविद्यालय हिसार के ब्रह्मचारियों द्वारा वेद पाठ किया जायेगा। सभी कार्यक्रमों में आर्यजनों की सपरिवार उपस्थिति प्रार्थनीय है।

शोक समाचार

११. परोपकारिणी सभा के मन्त्री श्री ओम मुनि जी की माता श्रीमती भँवरीदेवी का दिनांक २९-०१-२०१४ को ब्यावर में निधन हो गया।

श्रीमती भँवरी देवी की अन्त्येष्टि पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुई। परोपकारिणी सभा के समस्त सदस्य एवं परोपकारी परिवार दिवंगत आत्मा की सद्गति एवं शान्ति की कामना करते हैं। परिवार के लिए संवेदना प्रकट करते हुए परमेश्वर से सभी के लिए धैर्य प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं।

वैदिक पुस्तकालय के नवीन प्रकाशन

।। ओ३म् ।।

सन्ध्या-सुरभि

१. **हे सब मनुष्यों के स्तुति करने योग्य ईश्वर!** आप हमारे लौकिक व पारलौकिक सुख के लिए कल्याणकारी हो, अपने इसी स्वभाव के अनुरूप आप हम पर सुख की वृष्टि सर्वदा कीजिये।

२. **हे सर्वबलपुष्टिदाता परमेश्वर!** आपकी कृपा से हमारी सब इन्द्रियाँ व अङ्ग-उपाङ्ग संयमित व बलवान् रहें।

३. **हे शुद्धस्वरूप परमात्मन्!** हमारी सब इन्द्रियाँ व अङ्ग-उपाङ्ग आपके स्वरूप की निकटता से ही परिमार्जित तथा आनन्ददायक होंगे।

४. **हे प्राणबलदायकेश्वर!** आप अपनी कृपा से हमारे प्राण हमारी मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण करने वाले होकर हमारे अत्यन्त अनुकूल हो जावें।

५. **हे सर्वजगदुत्पादकाधार धर्मन्यायकारिन्!** जीवों के पाप-पुण्य का फल भुगाने तथा सब पदार्थों की स्थिति के लिए आपने पृथिवी से लेकर सप्तविध लोक व गायत्र्यादि छन्दों से विस्तृत विद्यायुक्त वेद-विद्या की रचना की है। इन सबके भीतर व बाहर अपने ऐश्वर्य व बल से विद्यमान आप इन सबसे पृथक् रहते हुए सबका धारण-पोषण कर रहे हैं। **हे सर्वाधिस्वामिन्!** इसी सामर्थ्य से आप हमारे सब पापों का मर्षण कीजिये, किञ्च इसी जन्म में हम परमैश्वर्य प्राप्त करने के योग्य हो जायें।

६. **हे सर्वदिक्व्यापकेश्वर चेतन!** सब दिशाओं में आपके द्वारा रचित सब पदार्थों का यथायोग्य उपयोग करते हुए, हम आपके द्वारा सदैव उन्नत व आनन्दित हों। धर्म की वृद्धि के लिए आप किसी भी दुष्ट को सुख नहीं देते हो। आपकी सहायता के आश्रय में हम धार्मिकों को तिलमात्र भी दुःख व भय न होगा; इसी दृढ़ निश्चयपूर्वक हम आपकी आज्ञा से कभी भी विमुख न हों।

७. **हे चराचरात्मा महीय परमेश्वर!** आपके सर्वानन्दस्वरूप व स्वप्रकाशस्वरूप को हम उत्तमता से प्राप्त करते हुए, आपके गुणों को प्रकाशित करने वाले सृष्टि के नियमों को भली प्रकार से जानते हैं। अब आप हमें प्राप्त होने में किञ्चित् भी विलम्ब न कीजिये। **हे सर्वगुणसम्पन्न देव!** आप हमारे काम, क्रोध आदि दोषों के विनाश के लिए उत्तम ज्ञान व बल हो, ऐसा मैं अपने मन-वचन से निश्चय कर चुका हूँ। आपकी ही कृपा से हम सब बुद्धि, इन्द्रिय, शरीर आदि पदार्थों को स्वस्थ रखते हुए १०० वर्ष तक देखें, जीवें, सुनें, कहें व अदीन रहें। इस प्रकार रहते हुए हम सर्वविद्यामय विज्ञानस्वरूप बुद्धि को प्रकाशित करने वाले आपका आह्वान करते हैं।

८. **हे पुरुष विशेष!** हमारे जो भी श्रेष्ठ पदार्थ व गुण हैं, वे सब आपको समर्पित करते हैं। आप विधिपूर्वक हमारी योग्यतानुसार इनका ग्रहण करके यथायोग्य न्याय कीजिये।

९. **हे सर्वप्रदाता ईश्वर!** आपके कल्याणस्वरूप, मोक्षस्वरूप, मंगलस्वरूप का हम ध्यान करते हुए आपको नमन करते हैं।

१०. **हे सर्वदुःखों की शान्ति करने वाले परमवैद्य!** सृष्टि के सभी जड़-चेतन पदार्थ हमारे लिए सदैव शान्त, अनुकूल व सुखदायक हों।

प्रकाशक : वैदिक पुस्तकालय, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) ३०५००१ **सम्पर्क :** ०१४५-२४६०१२०
Email : psabhaa@gmail.com • Website : www.paropkarinisabha.com
₹ २५/-

सम्बन्धित विवरण पृष्ठ ६ पर

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक प्रेषण : १५ फरवरी , २०१४ RNI. NO. ३९५९/५९

वैदिक पुस्तकालय के नवीन प्रकाशन

गायत्री ।। ओ३म् ।। मन्त्र

भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।।

शब्दार्थ : (ओ३म्) यह परमेश्वर का मुख्य निज नाम है, जिस नाम के साथ अन्य सब नाम लग जाते हैं (भूः) जो प्राणों का भी प्राण (भुवः) सब दुःखों से छुड़ाने हारा (स्वः) स्वयं सुखस्वरूप और अपने उपासकों को सब सुख की प्राप्ति कराने हारा है, उस (सवितुः) सब जगत् की उत्पत्ति करने वाले, सूर्यादि प्रकाशकों के भी प्रकाशक, समग्र ऐश्वर्य के दाता (देवस्य) कामना करने योग्य, सर्वत्र विजय कराने हारे परमात्मा का, जो (वरेण्यम्) अतिश्रेष्ठ, ग्रहण और ध्यान करने योग्य (भर्गः) सब क्लेशों को भस्म करने हारा, पवित्र शुद्धस्वरूप है (तत्) उसको हम लोग (धीमहि) धारण करें (यः) यह जो परमात्मा (नः) हमारी (धियः) बुद्धियों को उत्तम गुण, कर्म, स्वभावों में (प्रचोदयात्) प्रेरणा करे।

कविता में अर्थ

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू।
तुझसे ही पाते प्राण हम, दुःखियों के कष्ट हरता तू।।
तेरा महान् तेज है, छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु-वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान।।
तेरा ही धरते ध्यान हम, मांगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला।।

प्रकाशक : वैदिक पुस्तकालय, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) ३०५००१ सम्पर्क : ०१४५-२४६०१२०
Email : psabhaa@gmail.com • Website : www.paropkarinisabha.com
₹ २५/-

सम्बन्धित विवरण पृष्ठ ६ पर

प्रेषक:
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर
(राजस्थान) - ३०५००१

डाक टिकिट

Design@ MITTAL 9829797513